सादर भेंट

मंत्री,
नागरी मंडल
(पुस्तकालय के लिए)

—भवानीशंकर व्यास

अमर शहीद
बाबू इंद्रचंद सोनावत

(स्मृति-ग्रन्थ)

भवानी शंकर व्यास 'विनोद'

सेठ मुन्नालाल सोनावत प्रकाशन समिति
बीकानेर

● प्रकाशक
सेठ मुन्नालाल सोनावत प्रकाशन समिति
बीकानेर

● प्रथम संस्करण १९७०

● प्रथम पुण्य-तिथि पर प्रकाशित
स्मृति-ग्रंथ

● मुद्रक
नीलम आर्ट प्रेस,
दाऊजी का मन्दिर,
बीकानेर

AMAR SHAHEED BABU INDRACHAND SON
(SMRITI-GRANTH)

प्रकाशकीय

अमर शहीद बाबू इन्द्रचंद सोनावत के महाप्रयाण की ऐतिहासिक घटना हमारी पीढ़ी के लिए महान प्रेरणा की बात है। अपनी शहीदाना मृत्यु से लघु भ्राता बाबू इन्द्रचन्द लाखों लोगों के श्रद्धा का पात्र बना और इतिहास में अपना नाम अमर कर गया।

उसकी स्मृति समय की शिला पर सदैव अंकित रहेगी और आने वाली पीढ़ियाँ उसके बलिदान से मार्गदर्शन प्राप्त करेंगी।

उसके महान जीवन एवं शहीदाना मृत्यु ने जन-जन को अवगत करने तथा स्वामी-भक्ति एव कर्तव्य-परायणता की वेदी पर हुवे महान बलिदान से जन साधारण को प्रेरित करने के उद्देश्य से ही इस ग्रंथ का प्रकाशन किया गया है।

ग्रंथ का प्रकाशन मेरे लघु-भ्राताओं सर्वश्री सुन्दरलाल, [illegible], कन्हैयालाल एव आठों बहिनों के सहयोग एव प्रेरणा से सम्भव हुआ है। माता पिता का वरद हस्त हम सब भाई बहिनों पर सदैव रहा है तथा उन्हीं के प्रसाद से सारा कार्य संयोजित हो पाया है।

मैं इस अवसर पर लेखक श्री भवानी [illegible] एव मुद्रक श्री शिवानन्द गोस्वामी, डी० नीलम आर्ट प्रेस, [illegible] का हृदय से आभारी हूं।

साथ ही कलकत्ता निवासी [illegible] [illegible] श्री रामकृष्ण [illegible] [illegible] हूँ जिन्होंने बाबू इन्द्रचन्द [illegible] महान भूमिका का निर्वाह किया।

मैं उन समस्त [illegible] जिन्होंने [illegible] [illegible] भी [illegible]।

— [illegible]

अनुक्रम

प्रथम परिच्छेद

महानता का मापदंड

शरीर की क्षणभंगुरता और मनुष्य की नश्वरता सर्वविदित है। इस असार संसार में प्राणियों का आगमन एवं प्रस्थान अनवरत रूप से होता रहता है। बहुत से लोग मरणोपरान्त टीस एवं कसक छोड़ जाते हैं—बहुत से ऐसे होते हैं जिनकी मृत्यु अन्य लोगों के लिए राहत का काम करती है। लोग मिट्टी में मिल जाते हैं पर पृथ्वी की मिट्टी पर उनके पद चिह्न नहीं रहने पाते। इतिहासों मे उनके नाम नहीं उभरते; याद रहने के लिए उनके कर्म इतने प्रभावी नहीं होते। वे एक निकलने वाले जुलूस की तरह आते हैं और चले जाते हैं।

इसके उपरान्त भी पृथ्वी को जो रत्नगर्भा कहा गया है वह सर्वथा उचित है। इसी पृथ्वी की कोख से समय समय पर त्यागी, तपस्वी एवं विद्वान नरपुंगव प्रकट होते हैं जो अपनी कीर्ति-पताका दिक्दिगन्त में फैलाने मे समर्थ होते हैं। उनकी वाणी युगों तक ध्वनित होती है, उनके कर्म आने वाली पीढ़ियों के मार्ग को प्रशस्त करते हैं और उनके हस्ताक्षर इतिहासों की थाती बन जाते है।

आखिर वह क्या चीज है जो मनुष्य को अमर बनाती है? दौलत के बल पर जीवन में सुख की वृष्टि भले ही हो, मरणोपरान्त कीर्ति की सृष्टि संभव नहीं। मनुष्य के कर्म, उसके त्याग और बलिदान, परमार्थ एवं उदार भाव ही उसके जीवन को अनुकरणीय बना सकते हैं। दिशादर्शन करने की स्थिति में आने से पहले उसे कई अग्नि-परीक्षाओं में गुजरना होता है, कई मंजिले पार करनी

राष्ट्रपति द्वारा पुरस्कृत शिक्षाशास्त्री पंडित विद्याधर जी के उद्गार

श्रीयुत् इन्द्रचंद सोनावत बीकानेर के उन युवकों में एक अग्रणी और आदर्श युवक थे जो अपनी कर्तव्यनिष्ठा, ईमानदारी और अवसर आने पर निर्णयात्मक क्रियाशीलता के लिए अनुकरणीय एवं अनुसरणीय होते हैं।

यह राष्ट्र का दुर्भाग्य है कि आजकल इसमें ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न हो गई हैं जिनमें व्यर्थ ही इस प्रकार के आदर्श नवयुवकों को हठात् ही काल का ग्रास बना दिया जाता है।

इस ग्रास के बनने पर भी श्रीयुत् सोनावत ने राजस्थान की गौरवपूर्ण परम्परा के अनुकूल जिस निर्भीकता एवं स्वामीभक्ति का परिचय दिया वह स्तुत्य है।

भगवान से यही प्रार्थना है कि वह उनकी आत्मा को चिरशांति एवं अपूर्व लोक तथा परिवार वालों को इस हानि को सहन करने की शक्ति प्रदान करे।

विद्याधर शास्त्री एम. ए.

विद्या वाचस्पति, विद्या-रत्न, मनीषि

२५-१-१९७०   डायरेक्टर, हिन्दी विश्वभारती, बीकानेर

प्रथम परिच्छेद

महानता का मापदंड

शरीर की क्षणभंगुरता और मनुष्य की नश्वरता सर्वविदित है। इस असार संसार में प्राणियों का आगमन एवं प्रस्थान अनवरत रूप से होता रहता है। बहुत से लोग मरणोपरान्त टीस एव कसक छोड़ जाते हैं—बहुत से ऐसे होते हैं जिनकी मृत्यु अन्य लोगों के लिए राहत का काम करती है। लोग मिट्टी में मिल जाते हैं पर पृथ्वी की मिट्टी पर उनके पद चिह्न नहीं रहने पाते। इतिहासों में उनके नाम नहीं उभरते; याद रहने के लिए उनके कर्म इतने प्रभावी नहीं होते। वे एक निकलने वाले जुलूस की तरह आते हैं और चले जाते हैं।

इसके उपरान्त भी पृथ्वी को जो रत्नगर्भा कहा गया है वह सर्वथा उचित है। इसी पृथ्वी की कोख से समय समय पर त्यागी, तपस्वी एवं विद्वान नरपुंगव प्रकट होते हैं जो अपनी कीर्ति-पताका दिक्दिगन्त में फैलाने में समर्थ होते है। उनकी वाणी युगों तक ध्वनित होती है, उनके कर्म आने वाली पीढ़ियों के मार्ग को प्रशस्त करते हैं और उनके हस्ताक्षर इतिहासों की थाती बन जाते है।

आखिर वह क्या चीज है जो मनुष्य को अमर बनाती है ? दौलत के बल पर जीवन में सुख की वृष्टि भले ही हो, मरणोपरान्त कीर्ति की सृष्टि संभव नहीं। मनुष्य के कर्म, उसके त्याग और बलिदान, परमार्थ एवं उदार भाव ही उसके जीवन को अनुकरणीय बना सकते हैं। दिशादर्शन करने की स्थिति मे आने से पहले उसे कई अग्नि-परीक्षाओं मे गुजरना होता है; कई मंजिलें पार करनी

पड़ती है तथा कई इकाइयों एवं कड़ियों का संयोजन करना पड़ता है।

परिस्थितियां किसी को एक दम महान नहीं बना देती, हां, उस दिशा में वे सहायक अवश्य हो सकती हैं। वास्तविक महानता परिस्थितियों के साथ संधि करने में नहीं उनसे संघर्ष करने में है; प्रचलित स्वरों से पृथक एक सशक्त स्वर देने में है, भीड़ में रहते हुए भी अपने व्यक्तित्व के प्रभाव से पहचाने जाने की शक्ति में है।

यदि हम महानता का यह मापदंड स्वीकार करें तो हमें कई सामान्य से दिखने वाले प्राणियों में बड़प्पन के अंकुर प्रस्फुटित होते हुए दिख पड़ेंगे। सामान्य स्थिति में असामान्य काम करने वाला चाहे मतिभ्रष्ट मान लिया जावे पर असामान्य स्थिति में अपने संतुलन को बनाए रखने वाला अवश्य ही सम्मान का पात्र बन जाता है। मर कर के भी जो जीवन के शाश्वत मूल्यों की रक्षा कर सकता है वह तो सर्वथा सम्माननीय है।

एक निष्ठावान व्यक्ति अपने कर्तव्य-पालन में कहीं पर भी किसी भी परिस्थिति में यदि असामान्य स्थितियों में संघर्ष करते हुए मर जाय तो यह मौत शहीदाना बलिदान है। वह चाहे तो जीवन के ऐश्वर्यों के लिए आत्मसमर्पण कर सकता है; कर्तव्य को ताक में रख कर जान बचा सकता है; समय एवं परिस्थिति के अनुसार अपने को ढाल सकता है पर स्वेच्छा से मौत का वरण करके वह जो कुछ प्राप्त करता है, उसके सम्पूर्ण जीवन की संचित उपलब्धि भी उस प्राप्ति के आगे नगण्य बन जाती है।

इस परिप्रेक्ष्य में देखें तो अमर शहीद बाबू इन्द्र चंद सोनावत का अनुकरणीय बलिदान एक वाचाल कथा है जो मूक भावनाओं को वाणी देने में सक्षम है। उनका निधन निश्चित ही शहीदाना मौत है; एक महान एवं अमर बलिदान है। उनकी मौत उन्हें शहीदों की उस परंपरा से जोड़ देती है जिस पर आज इतिहास गर्व

े प्रकाश डालता है। यह जीवन्त त्याग एक बड़े रकम के लिए
ाावारण सी मौत नही, कर्तव्य पालन की दिशा में एक महान
ात्मोत्सर्ग है। यहा किसी मालिक की राशि की सुरक्षा का प्रश्न
ही, जोवन के शाश्वत मूल्यों – निष्ठा, कर्तव्य परायणता, त्याग–
के रक्षण की समस्या है। आगे के परिच्छेदों में हम इस महान
ााहसी व्यक्ति के चरित्र पर सविस्तार प्रकाश डालेंगे। मरुधरा के
इस सपूत ने जिस प्रकार मातृभूमि की पुनीत परम्पराओं का निर्वाह
करते हुए आत्मोत्सर्ग किया, उससे प्रत्येक मरुवासी का मस्तक
ऊंचा उठ जाता है। आज हमें ऐसे साहसी एवं निष्ठावान व्यक्तियों
की आवश्यकता है जो हर परिस्थिति में अपने कर्तव्य-पालन
के मार्ग से विचलित होने के लिए तैयार न हों। बाबू इन्द्रचद
सोनावत का अमर बलिदान उन लोगों के पथ को प्रशस्त करेगा
जो मौत को जीवन की अन्तिम परिणिति नही मान कर जीवन के
मूल्यों के रक्षण का साधन मात्र स्वीकार करते हैं।

दूसरा परिच्छेद

पारिवारिक परिवेश में

"है कौन इसे कहता उजाड़, मरुधरा रही उर्वरा धरा"
इसने उपजाया है प्रताप, गोरा बादल चुंडा हमीर,
इसकी गोदी में खेले हैं, राणा सांगा से परम वीर
वीरों की फसल यहां होती है, कौन इसे कहता........

कविवर भरत व्यास की ये पंक्तियां कितनी सार्थक एवं सजीव हैं। मरुधरा वीर प्रसविनी रही है। आज भारत के इतिहास की ओर नजर डालें तो एक से एक महान त्यागी पुरुष इसी रत्नगर्भा भूमि में अवतरित हुए दिखाई देते हैं ! मालिक एवं मातृभूमि के लिए प्राणोत्सर्ग करने वाले झाला सरदार, भावी नरेश के लिए अपने कोख से जन्मे बच्चे का सहर्ष बलिदान करने वाली पन्ना धाय, मालिक के लिए औरंगजेब से टक्कर लेने वाले वीर दुर्गादास आदि तो चन्द उदाहरण मात्र हैं। इतिहास की पंक्ति पंक्ति इन वीरों की अमर गाथा गाती हुई दिख रही है।

इस पुनीत परम्परा में कई वीर अपना योग दान देते रहे हैं। बाबू इन्द्रचंद सोनावत के शहीदाना प्रस्थान के पीछे भी त्याग की उत्कृष्ट भावना रही है जो झाला सरदार के हृदय में थी। उन्होंने मौत का उसी प्रकार वरण किया जैसे लड़ते लड़ते वीर गति पाने वाले सैनिक करते हैं। एक तरफ उन्हें अपने मां बाप, भाई, बहिन, संतान आदि का मोह खींच रहा था तो दूसरी तरफ कर्त्तव्य की पुकार उन्हें आकर्षित कर रही थी। एक तरफ जीवन का ऐश्वर्य, पत्नी का प्यार, मां की ममता एवं बच्चों की कमनीयता थी तो

दूसरी तरफ स्वामी भक्ति, निष्ठा एवं त्याग का बुलावा था ।

> भर रही कोकिला इधर गान
> मारू बाजे पर उधर तान
> है रंग और रण का विधान
> मिलने आए हैं आदि अन्त
> वीरों का कैसा हो बसन्त ?"

बाबू इन्द्रचन्द सोनावत ने जैसे सुभद्रा कुमारी चौहान की इन पंक्तियों को साकार कर दिया हो — ऐसा लगता है ।

उनके इस उत्कृष्ट त्याग एवं महान चरित्र निर्माण के पीछे उनके पिता कर्मयोगी श्री जोगीलाल जी सोनावत की महान देन है। पुत्र में जिन गुणों का क्रमिक विकास हुआ वे पिता के जीवन में अपने चरम उत्कर्ष तक पहुंच चुके हैं। जोगीलाल जी सोनावत सहनशीलता की प्रतिमूर्ति तो है ही, महान सेवाभावी एवं परोपकारी व्यक्ति हैं। जीवन के अनेक उतार चढावों को उन्होंने एक धर्मनिष्ठ व्यक्ति की तरह सहर्ष स्वीकार किया है। उनका हृदय गुणों का सागर है जिनमें सत्य, प्रेम-भाव, उदार-व्यवहार, मृदु-भाषण, धर्म-निष्ठा, कर्तव्य-परायणता, अतिथि-सत्कार, धार्मिक सहिष्णुता, आदि गुण उनके व्यक्तित्व को काफी ऊंचा उठाने में सहायक हुवे हैं।

कुल-भूषण श्री जोगीलाल जी सोनावत का जन्म संवत १६४२ के मिगसर शुक्ला द्वितीया को हुआ। अपने जन्म दिवस के अनुरूप ही वे दूज के चांद की तरह निरन्तर ही विकासमान होते रहे तथा उन्होंने अपूर्व दक्षता प्राप्त की। नौ वर्ष की छोटी आयु से अपने व्यवसाय में लगने वाले कर्मयोगी श्री जोगीलाल जी ने लगभग ७० वर्षों तक निरन्तर परिवार के पोषण एवं गृहस्थ के संचालन के लिए बिना आराम के व्यावसायिक कार्य किया। ७६ वर्षों की वय पाने पर पुत्रों की प्रार्थना पर आपने सक्रिय

मानते हैं।

श्री सोनावत शरीर से चाहे कृषकाय हों पर उनका मनोब
बहुत ऊंचा है—कठोर से कठोर आघात सहन करने की आप
क्षमता है। संसार असार है नश्वर है, क्षणभंगुर है, इस मृत्युलो
में समय-असमय सब लोग अपनी जीवन लीला समाप्त करके च
देते हैं। जाने वालों में बच्चे, जवान, बुड्ढे सब होते हैं। सोनाव
जी के जीवन काल में भी उनके कई प्रिय परिजन अकाल ही का
के ग्रास बने—मेधावी, व्यवहारकुशल दामाद की मृत्यु का आघा
दूर ही नहीं हुआ था कि शहीद इन्द्रचंद का वियोग वज्राघात
समान सामने आया पर "वज्रादपि गरीयसी" वाले हृदय से उन्हों
होनी की इस लीला को सहन किया।

यदि संक्षेप में कहा जाय तो कर्मयोगी श्री सोनावत जी
सहानुभूति, सहिष्णुता और साहस की त्रिवेणी है। इतने लं
जीवन काल में पारस्परिक झगड़ों से दूर रहने के कारण
अजातशत्रु बन चुके हैं।

मनोवैज्ञानिकों का कथन है कि संतान के जीवन पर सर्वाधि
प्रभाव उसकी माता का होता है। मां ही उसके जीवन को ए
निश्चित सांचे में ढालती है— उसे एक दृढ़ धरातल देती है; न
पोन का पोषण एवं संरक्षण करती है तथा उसे नए नए आगा
में अनुकूल होने के योग्य बनाती है। शहीद इन्द्रचन्द सोनावत
जिन महागुणों का विकास हमने देखा उनके पीछे माताजी श्रीम
रतन देवी सोनावत का कितना महान योग है- इसकी कल्प
मात्र ही की जा सकती है।

सेवा, सद्भाव, सहनशीलता एवं सदाचार की मञ्जुल मू
श्रीमती रतन देवी अनुसूया की तरह संसार में रहते हुए भी निर्लि
जीवन बिता रही है। अपने पति कर्मयोगी श्री जोगीलाल जी
सच्ची सहधर्मिणी होने के नाते उन्होंने दाम्पत्य जीवन ही न

कर्मयोगी सेठ जोगीलालजी सोनावत

स्नेहमयी माता रतनदेवी सोनावत

पूरे पारिवारिक परिवेश में सदैव एक आदर्श महिला का उदाहरण प्रस्तुत किया है। उनके जीवन मे साधारण नारियों वाला कलह, द्वेष एव व्यर्थ का कोलाहल बिल्कुल नही है।

परिवार के व्यापक परिवेश का यदि अवलोकन किया जाय तो सामान्यत. सास बहू, ननद-भावज; जेठानी-देवरानी के झगडे स्वाभाविक रूप से सामने आते हैं। ये झगड़े संयुक्त परिवार की जड़ों में कथ्थे का काम करते है तथा एक परिवार कई इकाइयो मे बट जाता है। इन परिवारों मे जीवन-पर्यन्त एक दूसरे से न बोलने वाले भाइयों का निर्माण होता है, जमीन सम्बन्धी झगडो और सम्पत्ति के मामलों मे परिवार विरोधी खेमों में बंट कर अदालतों मे खड़ा हो जाता है, वकील नजदीक हो जाते है और भाई दूर। इस परिवेश में यदि देखा जाए तो यशस्वी कर्मयोगी श्री जोगीलाल जी का परिवार वास्तव मे एक आदर्श परिवार है। माता श्रीमती रतन देवी वह महिला-रत्न है जिसने सम्पूर्ण परिवार की माला को सुदृढ धागो में पिरोई है। झंझावातो से भी नही बिखरने वाला यह परिवार आदर्श पितृ-भक्ति, मातृ-सेवा एव भ्रातृ-प्रेम के क्षेत्र मे अपने आप में एक उदाहरण बन गया है।

रतन देवी जी मे कार्य करते रहने की अद्भुत प्रवृति है। निष्क्रियता को वे जीवन का अभिशाप मानती है। शारीरिक रूप से चाहे दुर्बल हो गई हों पर कर्तव्य-परायणता के क्षेत्र में वे जीवंत एवं चैतन्य महिला है।

धार्मिक प्रकृति की होने के कारण वे स्वभावतः उन सभी दोषों से दूर है जो अधार्मिक एव झगड़ालू नारियों में देखने को मिलते हैं। अपने पति के सदृश्य इनके हृदय में भी अन्य धर्मों के प्रति समादर के भाव है तथा साधु सन्तों एवं सन्यासियों का अपमान करना वे पाप कर्म मानती हैं।

मां की सफलता का अनुमान सतान को सही दिशा मे अभि-

वृद्धि से ही लगाया जा सकता है। यदि संतान संघर्षमय जीवन में साहस एवं लगन से आगे बढ़ने की क्षमता रखती है तो स्वाभाविक रूप से मां का जीवन सफल है। मां ही तो संतानों को जीवन का सन्देश देती है, उनकी धमनियों में साहस का संचार करती है, उन्हें व्यापक दृष्टि प्रदान करती है तथा परिस्थितियों के अनुसार परिवर्तन होने की कला का विकास करती है। उसके हाथ जीवन को संवारते हैं, उसकी वाणी उसे मुखरित करती है, उसका प्यार उसे संरक्षण देता है। मां की ममता अपने आप में एक ऐसी अमूल्य निधि है जिसकी तुलना बड़े से बड़ा खजाना भी नहीं कर सकता।

बाबू इन्द्रचंद सोनावत में जो स्वामी-भक्ति, कर्त्तव्यपरायणता श्रम निष्ठा, पारस्परिक प्यार; साहस आदि सद्गुण थे वे ऐसी ही मां से प्राप्त हो सकते हैं जो स्वयं इन गुणों का अर्जन कर चुकी हो। रतन देवी की कोख से जो "रत्न" जन्मा उसी ने ही तो उन्हें "रत्न-गर्भा" बना दिया। एक प्रकार से रतन देवी पृथ्वी का पर्यायवाची बन गई। अपने प्रिय पुत्र के अवसान पर इस परम साहसी महिला ने जो धीरज रखा वह सराहनीय है। जो पुरुष जीवन में ही मरते मरते जीते है उनका जीना क्या मात्र जीना है? इसके विपरीत जो मर कर भी जीवन को नया जीवन दे सकें वे ही सच्चे माने भी जीते हैं। रतन देवी एक मृत पुत्र की असहाय मां नहीं, एक अमर शहीद की वीर जननी बन गई। उन्होंने अपने पुत्र को कर्त्तव्य-पथ से विचलित होने का कभी भी संदेश नहीं दिया। इसके विपरीत वे मानती हैं कि कर्त्तव्य के रास्ते में हंसते हंसते पर मिटना ही तो वीरों का धर्म है--

"पूत हुयो जद हरखियो सगलो बन्धु समाज।
मां ना हरखी जनम दिन जितनी हरखी आज॥"

एक सच्चे परिवार में मां का दायित्व और भी बढ़ जाता है

पुत्रों को जीवन' की कला का ज्ञान देना और "पुत्रियों" को नए नए 'गृहस्थ" को संवारने में दक्ष बनाने की शिक्षा देने की दोहरी जिम्मेवारी उसे निभानी पड़ती है। ५ पुत्रों एव ८ पुत्रियों के जीवन का निर्माण करके एक प्रकार से अपने कर्तव्य पालन के क्षेत्र में तो वे सफल हैं ही; समाज निर्माण में भी उनका परोक्ष रूप मे योगदान रहा है। आगे की पंक्तियाँ बताएगी कि जिन पुत्र-रत्नों का श्रीमती रतन देवी ने सही "विकास" किया वे सामाजिक रूप मे कितने मूल्यवान सिद्ध हुए हैं।

कर्म योगी श्री जोगीलालजी एव मातेश्वरी श्रीमती रतन देवी के ज्येष्ठ पुत्र श्री वछराज जी सोनावत में माता-पिता दोनो के ही सद् गुणों का मिश्रित समावेश है। यदि वे पिता की तरह क्रिया-शील, कर्तव्यपरायण, परोपकारी, धर्म-सहिष्णु एवं उदार हैं तो माता की तरह सहनशील, शीतल; प्रेममय; धर्म-निष्ठ एवं सरल स्वभाव के भी हैं। उनमें सादा जीवन, उच्च विचार वाले किसी "संत" के दर्शन होते हैं। इस तडक-भडक एवं चकाचौंध की दुनिया मे; इस दिखावे व ऊपरी टीपटाप के युग में जैसे वे भीतर है वैसे ही "बाहर" भी हैं। उन्हे गर्मियो में साधारण धोती, चोले व चप्पल अथवा जूतों में देखा जा सकता है तो सर्दियों मे अधिक से अधिक एक बन्द गले का कोट उनके वस्त्रों मे जुड़ जाता है। वे "जनक" की तरह अपने कर्तव्य का पालन करते हुए भी "योगी" हैं। उन्होंने 'व्यष्टि" को 'समष्टि" के समर्पित कर रखा है।

सभी धर्मों के प्रति प्रेम तो उन्हें विरासत में मिला ही है; वे उसका यथार्थ रूप से प्रयोग भी करते हैं। गीता और रामायण का पारायण उनके जीवन का अंग है, बाइबल का उन्होंने विपद अध्ययन किया है तथा जैन-दर्शन तो उन्होंने अपने जीवन में उतार लिया है। वे सभी धर्मों के समन्वय के स्वरूप बनते जा रहे हैं।

बही खातों में लिप्त रहने वाले महाजन लोग जहाँ जीवन

वृद्धि से ही लगाया जा सकता है। यदि संतान संघर्षमय जीवन में साहस एवं लगन से आगे बढ़ने की क्षमता रखती है तो स्वाभाविक रूप से मां का जीवन सफल है। मां ही तो संतानों को जीवन का सन्देश देती है, उनकी धमनियों में साहस का संचार करती है, उन्हें व्यापक दृष्टि प्रदान करती है तथा परिस्थितियों के अनुसार परिवर्तन होने की कला का विकास करती है। उसके हाथ जीवन को संवारते हैं, उसकी वाणी उसे मुखरित करती है, उसका प्यार उसे संरक्षण देता है। मां की ममता अपने आप में एक ऐसी अमूल्य निधि है जिसकी तुलना बड़े से बड़ा खजाना भी नहीं कर सकता।

बाबू इन्द्रचंद सोनावत में जो स्वामी-भक्ति, कर्त्तव्यपरायणता श्रम निष्ठा, पारस्परिक प्यार; साहस आदि सद्गुण थे वे ऐसी ही मां से प्राप्त हो सकते हैं जो स्वयं इन गुणों का अर्जन कर चुकी हो। रतन देवी की कोख से जो "रत्न" जन्मा उसी ने ही तो इन्हें "रत्न-गर्भा" बना दिया। एक प्रकार से रतन देवी पृथ्वी का पर्यायवाची बन गई। अपने प्रिय पुत्र के अवसान पर इस परम साहसी महिला ने जो धीरज रखा वह सराहनीय है। जो पुरुष जीवन में ही मरते मरते जीते हैं उनका जीना क्या सार्थक जीना है? इसके विपरीत जो मर कर भी जीवन को नया जीवन दे सकें वे ही सच्चे माने भी जीते हैं। रतन देवी एक मृत पुत्र की असहाय मां नहीं, एक अमर शहीद की वीर जननी बन गई। उन्होंने अपने पुत्र को कर्त्तव्य-पथ से विचलित होने का कभी भी संदेश नहीं दिया। इसके विपरीत वे मानती हैं कि कर्त्तव्य के रास्ते में हंसते हंसते मर मिटना ही तो वीरों का धर्म है--

"पूत हुयो जद हरखियो सगलो बन्धु समाज।
मां ना हरखी जनम दिन जितनी हरखी आज॥"

एक लम्बे परिवार में मां का दायित्व और भी बढ़ जाता है

पुत्रों को 'जीवन' की कला का ज्ञान देना और "पुत्रियों" को नए नए 'गृहस्थ" को संवारने में दक्ष बनाने की शिक्षा देने की दोहरी जिम्मेवारी उसे निभानी पड़ती है। ५ पुत्रों एव ८ पुत्रियों के जीवन का निर्माण करके एक प्रकार से अपने कर्तव्य पालन के क्षेत्र में तो वे सफल है ही; समाज निर्माण में भी उनका परोक्ष रूप से योगदान रहा है। आगे की पंक्तियाँ बताएगी कि जिन पुत्र-रत्नों का श्रीमती रतन देवी ने सही "विकास" किया वे सामाजिक रूप से कितने मूल्यवान सिद्ध हुए हैं।

कर्म योगी श्री जोगीलालजी एव मातेश्वरी श्रीमती रतन देवी के ज्येष्ठ पुत्र श्री वछराज जी सोनावत में,माता-पिता दोनों के ही सद् गुणों का मिश्रित समावेश है। यदि वे पिता की तरह क्रिया-शील, कर्तव्यपरायण, परोपकारी, धर्म-सहिष्णु एवं उदार हैं तो माता की तरह सहनशील, शीतल; प्रेममय; धर्म-निष्ठ एवं सरल स्वभाव के भी हैं। उनमें सादा जीवन, उच्च विचार वाले किसी "संत" के दर्शन होते हैं। इस तड़क-भड़क एवं चकाचौंध की दुनिया मे; इस दिखावे व ऊपरी टीपटाप के युग में जैसे वे भीतर है वैसे ही "बाहर" भी हैं। उन्हें गर्मियों में साधारण धोती, चोल व चप्पल अथवा जूतों में देखा जा सकता है तो सर्दियों में अधिक से अधिक एक बन्द गले का कोट उनके वस्त्रों में जुड़ जाता है। वे "जनक" की तरह अपने कर्तव्य का पालन करते हुए भी 'योगी' है। उन्होंने 'व्यष्टि" को 'समष्टि" के समर्पित कर रखा है।

सभी धर्मों के प्रति प्रेम तो उन्हें विरासत में मिला ही है; वे उसका यथार्थ रूप से प्रयोग भी करते हैं। गीता और रामायण का पारायण उनके जीवन का अ ग है, बाइबल का उन्होंने विषद अध्ययन किया है तथा जैन-दर्शन तो उन्होंने अपने जीवन में उतार लिया है। वे सभी धर्मों के समन्वय के स्वरूप बनते जा रहे हैं।

बही खातों में लिप्त रहने वाले महाजन लोग जहाँ जीवन

के अन्य सम्बन्धों में नीरस होते है वहां उच्च कोटि के हिसाब परीक्षक श्री वछराज जी मानवीय सम्बन्धों के क्षेत्र में अधिक सक्रिय हैं। आंकड़ों ने उन्हें "यंत्रवत" नीरस एव निठु नहीं बनाया अपितु सख्याओं के जाल में रह कर तो वे और अधिक संख्या में लोगों के नजदीक आए हैं। उनका जीवन त्याग का जीवन्त एव ज्वलंत उदाहरण है। रात्री भोजन कुर्म के जूते जूठन आदि तो उन्हें त्याज्य हैं ही, पर-निंदा, स्वार्थ-सिद्धि एवं छिछलेपन से भी वे कोसों दूर हैं। वे संस्कृत के निम्न श्लोक के सही माने में प्रतीक बन गए है।

"मातृवत् परदारेषु परद्रव्येषु लोष्ठवत्
आत्मवत् सर्वभूतानां यः पश्यति सः पंडितः"

यदि 'पंडित' होने की यही परिभाषा है तो 'पंडित' वछराज जी इस महिमा के सर्वथा उपयुक्त पात्र हैं। भारत सेवक समाज की सदस्यता उन्होंने समाज सेवा के पावन लक्ष्य से ग्रहण की तथा कई वर्षो तक वे इस संस्था से सम्बन्धित रहे।

प्रातः ६-३० से रात्रि ११ बजे तक निरन्तर क्रियाशील रहने वाले इस व्यक्ति के जीवन का सर्वाधिक उज्जवल पक्ष उनकी उदात्त समाज सेवा की भावना है। वे धनी मानी एवं बैंक बैलेंस वाले व्यक्तियों की सेवा को सामाजिक दायित्व नहीं मानते अपितु दीनहीन, दलित; परिवार-परित्यक्त, असहाय, अपाहिज, विधवा निधना एवं कृषकाय वृद्धों की सेवा को ही अपने पुनीत कर्तव्य का एक मात्र अंग मानते हैं। उनके छोटे जीवन काल में भी ऐसे अनेकों उदाहरण देखने को मिलते हैं जहां उन्होंने पूर्ण निस्वार्थ भाव से अपने इस चरित्र का परिचय दिया है। पड़ौसी धर्म निर्वाह में वे अत्यन्त सफल एवं अनुकरणीय व्यक्ति सिद्ध हुए हैं। उनकी सेवा भावना क्षणिक अथवा अल्पकालीन नहीं अपितु जीवन पर्यन्त चलने वाली साधना है। ऐसे भी उदाहरण मिलते है जो

. से दाएँ (खड़े हुए) सहोदर बाबू मेघराज, बाबू कन्हैयालाल (बैठे हुए) स्व० बाबू इन्द्रचन्द, बाबू बछराज, बाबू सुन्दरलाल

कि उन्होंने लगातार दस दस वर्षों तक एक असहाय वृद्ध को निस्वार्थ भावना से सेवा ही नहीं की उसकी औषधि-खर्च तथा निर्वाह के लिए भी दौड़धूप करके समाज के पैसे के सदुपयोग होने में मदद की। जिसका साथ दिया उससे घर वालों सा सम्बन्ध बना लिया। कभी कहीं से किसी के लिए चन्दा ला रहे हैं तो किसी स औषधि अथवा दूध का डिब्बा लाकर किसी को दे रहे हैं। मासिक-वृत्ति या उदार सहायता किसी के निमित ली जा रही है तो दौड़-धूप करके किसी बीमार की सेवा की व्यवस्था की जा रही है। गर्मी या वर्षा मे छाता तन जाता है, सर्दी मे बद गले का कोट शरीर पर आ जाता है पर जनसेवा की "अलख" बराबर साथ रहती है। ऐसे भी उदाहरण है जहां परिवार वाले अपने कर्तव्य निर्वाह मे जागरूक नहीं रहे पर बछराज जी स्वय रोगी के लिए उसका परिवार बन गए। वे सेवा को समय (चार वर्ष पाच वर्ष) के पैमाने से नहीं मापते। सेवा तो उनके जीवन का अंग है, उनके व्यक्तित्व की आत्मा है, उनके चरित्र की चमक है। इधर कोई दीन हीन व्यक्ति रोगग्रस्त हुआ और उधर उन्होंने अपना कार्य आरम्भ किया। रोगी की देख भाल मे सुध बुध खो देने वाले श्री सोनावत जी तपतपाती गर्मी की दोपहर अथवा कपाने वाली सर्दी की अर्द्ध रात्री की चिन्ता नहीं करते। एक एक दिन मे रोगी को कई-कई बार सभालते है, उसकी आवश्यकताओ की पूर्ति करते है तथा उसमें 'मनोबल' का सचार करते है।

पी. डबल्यू. डी. का यह कर्मचारी "पब्लिक वर्क्स" अथवा 'पब्लिक वेल्फैयर" के लिए विनोबा की तरह जीवनदानी बना हुवा है। शहीद इन्द्रचन्द सोनावत में जो त्याग; परोपकार; समाज सेवा, पर पीड़ा से द्रवित होने की भावना आदि गुण थे उन पर श्री बछराज जी के व्यक्तित्व की स्पष्ट छाप अंकित थी। कलकत्ते जैसे बडे नगर मे रह कर भी बाबू इन्द्रचन्द ने

"आत्मीयता" का अलौकिक परिचय दिया था। यह 'आत्मीयता' का अमूल्य भाव उन्हें अपने ज्येष्ठ भ्राता से ही प्राप्त हुवा था।

संभवत पाठकगण इस शहीद परिवार के अन्य सदस्यों के बारे में भी संक्षिप्त परिचय जानना चाहेंगे। इससे पहले कि हम शहीद बाबू इन्द्रचन्द सोनावत के जीवन-चरित्र पर प्रकाश डालें हमें उनके परिवार के अन्य सदस्यों से साधारण परिचय तो कर ही लेना चाहिए। सेठ मोतीलाल जी के इस परिवार में उनके पुत्र कर्मयोगी जोगीलालाल जी के पांच पुत्र बाबू बछराज; बाबू सुन्दर लाल; स्वर्गीय बाबू इन्द्रचन्द; बाबू मेघराज; बाबू कन्हैयालाल; सूरज देवी; भीखी देवी; भवरी देवी; माणक देवी; लक्ष्मी देवी; इन्दर देवी; बरजी देवी एवं शारदा देवी ये आठ पुत्रियां हैं। इस विशाल परिवार के इन सदस्यों का विस्तृत परिचय हम यथास्थान देते रहेंगे। अभी तो पाठकों की जिज्ञासा शांत करने के लिए शहीद बाबू इन्द्रचन्द सोनावत का जीवन-चरित्र शैशव से शहादत तक प्रस्तुत किया जा रहा है।

तृतीय परिच्छेद

शैशव से शहादत तक

ससार के रंगमच पर प्रकृति-नटी का रोल बड़ा ही असाधारण है। वह घटनाओं को जीवन्त करके प्रस्तुत करती है। कहीं पर यह पृष्ठभूमि है तो कहीं पटाक्षेप पर हर पृष्ठभूमि बता देती है कि पटाक्षेप कैसा होगा। हर सुबह दिन के सुहावने अथवा अनमने होने का परिचय दे देता है— हर चेहरा दिल की गहराई के बारे में कुछ न कुछ बता ही देता है। मनुष्य का जीवन बचपन में बनता है; वह मा बाप के हाथों में बरता है, समाज में निखरता है। समाज ही वह रगभूमि है जहा जीवन का अभिनय विभिन्न भाव-भगिमाओं, शैलियो एव शिल्पो मे होता है। समाज में मरने वाले तो अनेक हैं पर समाज के लिए मरने वाले लाखों में एक ही होते हैं।

हमें इस सन्दर्भ मे शहीद बाबू इन्द्रचन्द सोनावत के बचपन मे परिचित होना है ताकि यह जान सकें कि इस पृष्ठभूमि (बचपन, का ऐसा जोरदार पटाक्षेप (मरण) कैसे हुआ? कई बार असाधारण व्यक्तियों के साधारण बचपन होते हैं। महात्मा गाधी का बचपन उनके आगे के जीवन की पृष्ठभूमि नही बन सका। उसमें मद्यपान धूम्रपान, मासभक्षण, चोरी आदि बुराइयों ने प्रवेश पा लिया पर ये सब बालू की दीवार की तरह ढह गए और आगे का जीवन अनुकरणीय बन गया। कई साधारण व्यक्तियों के असाधारण बचपन होते हैं—असाधारण इसलिए क्योंकि जीवन की आगे की घटनाओं से उनके बचपन की घटनाएं सगति

नहीं बिठा सकती। इस श्रेणी में महाराणा प्रताप के भाई शक्ति
आते हैं जो बचपन में अत्यन्त निर्भीक थे पर जवानी में वीर हो
हुए भी उनके पांव डगमगा गए थे–वे काफी समय तक अपने
की तृप्ति के लिए मातृभूमि के मान से भी खेलने की भूमि
निभाते रहे।

इन दो स्थितियों के बीच में कुछ ऐसे व्यक्ति भी हैं जिन
बचपन चाहे सामान्य हो मृत्यु उनके सारे जीवन को महानता
देती है। उनकी मौत सौ जिन्दगियों से भी जोरदार बन जाती है
जिसने मरने की कला सीखली वही महान बन गया। मरने के
बाद 'राम राम सत' तो सभी करते हैं, मरते समय 'हे राम' कह
वाला ही महात्मा गांधी बन सकता है।

बाबू इन्द्रचंद का बचपन एक ऐसे धार्मिक परिवार में बी
था जहां धर्म को आडम्बर का जामा नहीं पहनाया जाता। ध
को धारण करने की कला माना जाता है।

धारण करने का अर्थ अच्छे गुणों एवं आचरणों को अपना
से है - कर्त्तव्य-पथ पर आरूढ़ होने से है; धर्म को जीवन में उता
रने से है। बाबू इन्द्रचन्द ने बचपन से ही धर्म की इस मर्यादा को
धारण कर लिया और मृत्युपर्यन्त कर्तव्य की साधना को उनका
ध्येय बनाए रखा।

मरुधर प्रदेश बीकानेर और श्रावण का महीना। यह चाँ
और चकोर का मेल है; उषा और प्रकाश का सामंजस्य है,
मिश्री और मावे का मिश्रण है। बीकानेर की रौनक श्रावण में
निखरती है और श्रावण इसलिए सम्मान देता है क्योंकि उसका
नाम बीकानेर से जुड़ गया है। श्रावण हरियाली का प्रतीक है
यह सुरंगी मरुधरा को नया जीवन देता है। धरती को हरी भरी
बनाता है, उसे सम्मान देता है। श्रावण में इन्द्र अपना मंड
खोल देता है; सूर्य की किरण इन्द्र धनुष बनाती है; खेतों में

उपजता है। इस तरह बीकानेर का श्रावण से; श्रावण का इन्द्र से; इन्द्र का धरती के सुनहले स्वरूप से सम्बन्ध है। संवत १६६५ में श्रावण के महीने और बीकानेर में 'इन्द्र' का जन्म हुआ— सोनावत परिवार में। प्रकृति नटी ने चारों का संयोग कर दिया— श्रावण, बीकानेर, इन्द्र और सोना एकाकार हो गए।

रतनदेवी को जो 'रतन' प्राप्त हुआ वह कभी 'रत्नगर्भा' वसुन्धरा का 'रतन' बन जायगा, ऐसी कल्पना किसी ने नहीं की थी। वह बचपन में शर्मीला था— अतः एकान्त प्रिय था। एकान्त प्रिय था अतः चिन्तनशील था। चिन्तन मन को आनन्द; वाणी को गम्भीरता और कर्म को गति देता है। बाबू इन्द्रचन्द मन वचन, कर्म तीनों से ही अभिन्न स्थिति के थे। उनमें मातृ भक्ति और पितृ सेवा की भावना तो शुरु से ही थी। भाइयों एवं बहिनों में उनका प्रेम निश्छल एवं शुद्ध था। वे हर परिस्थिति में खुश रहने वाले थे।

गौर वर्ण उन्नत भाल, बड़ी बड़ी आखें, भरा हुआ चेहरा, चेचक के दाग, सीने पर बाल आकर्षक स्वरूप······ ये सब मिल करके उनकी रचना हुई थी। ऊपर से तीन चीजें और मिल गई। हृदय में प्रेम वाणी में मिठास और मस्तिष्क में परिवार की उन्नति की भावना। इन सबने मिल कर एक सम्पूर्ण व्यक्तित्व का निर्माण किया था।

बचपन और भोलापन, बचपन और मस्त खुशियां, बचपन और अबोध व्यवहार····· हर बालक की तरह इन्द्रचन्द में भी ये सब बातें थीं। बचपन के भोले भाले साथी भी कुछ लेने की नियत से साथ नहीं करते। साथ इसलिए करते हैं कि साथी हैं और जीवन में साथ देंगे।

बाबू इन्द्रचन्द के बचपन के साथी आज इसलिए गर्व करते हैं कि उनका ही एक साथी महान बना— लाखों लोगों के श्रद्धा

का पात्र बना— कलकत्ता जैसे नगर में आदर्श चर्चा का विष
बना। उसके साथी आज कई संस्मरणों को याद करके श्रद्धा के
सुमनों के रूप में आंसू चढ़ा देते हैं—एक भाव-श्रद्धांजली अर्पित
करते हैं। एक साथी श्री शिव चन्द आचार्य के अनुसार इन्द्रचन्द
में इतना अपनत्व था कि बाहर से बीकानेर आते ही पहले अपने
साथियों से मिलता। उनके साथ घंटों तक बचपन की बातों का
नहीं टूटने वाला सिलसिला बनाए रखता, अपने वार्तालाप में बच-
पन के निश्छल स्वरूप को साकार बनाता। वह प्रकृति-प्रेमी था
अतः उसका अधिकांश समय किसी उद्यान में व्यतीत होता। उसे
वहां सच्चे सुख की अनुभूति होती थी।

बचपन का प्यार जाति-पांति, धर्म अथवा वर्गों के संकीर्ण
दायरों से ऊपर होता है। उस समय की मित्रता बालू के घरोंदों
की तरह अस्थाई नहीं होती। निश्छल, निस्वार्थ, निष्काम प्रेम
ही बचपन के सम्बन्धों का एक मात्र आधार है। ग्रहस्थ के
झंझटों से दूर; पारिवारिक जिम्मेवारियों से परे; आर्थिक उत्तर-
दायित्वों से विमुक्त बचपन का अपना अनोखा ही महत्व होता
है। वह खेल-कूद, आमोद-प्रमोद और मनोरंजन का समय होता
है— उसमें वैयक्तिक अपमान अथवा सम्मान गौण होते हैं—उसमें
इज्जत इतनी नाजुक नहीं होती कि जरा सी कचोट से ही खराब
हो जाए— बड़प्पन का लबादा अथवा झूठी शान का मुखौटा
धारण नहीं करना पड़ता।

"चिन्ता रहित खेलना, खाना वह फिरना निर्भय स्वच्छन्द।
कैसे भूला जा सकता है बचपन का अतुलित आनन्द?"

इन्द्रचन्द भी ऐसे ही आनन्द का भागीदार था—उसका बच-
पन का व्यक्तित्व भी जीवन्त था। मुर्दापरस्ती, निराशा अथवा
बुजदिली ने उसका कहीं पर भी साथ नहीं निभाया। वह प्रकृति
प्रेमी और मस्त मिजाज था अतः दोस्तों के साथ गोठें करने नहीं

न्दर से स्थान पर जाता तथा वहां प्रकृति के सानिध्य में छोटे-
ोटे नादान बच्चे यौवन की जिम्मेदारी का अनजाने ही पाठ
ीखते रहते। गोठ की जिम्मेदारियों का बंटवारा होता और सब
बना किसी आनाकानी के अपना-अपना काम पूरा करते। बचपन
ी प्रयोगशाला में एक ऐसे रत्न का निर्माण हो रहा था जो आगे
ाकर एक सजग, सक्रिय एवं उत्तरदायी व्यक्ति बनने वाला था।

इसी प्रयोगशाला में उसने प्रेम एवं पारस्परिक सद्भाव की
ईंनियों से अपना व्यक्तित्व स्वयं गढ़ा। सक्रियता की तूलिका से
समें नए रंग भरे, उत्तरदायित्व की विकसित होने वाली भावना
ने बचपन को जवानी दी। बालक इन्द्र चन्द अब कुछ बड़ा होने
गा था।

बचपन में कुछ ऐसी बातें उसने सीखी थीं जो उसकी जवानी
र छा गई या जिनके फ्रेम में यौवन का चित्र लगाया गया। उसमें
भाई-बहिनों के प्रति जिस निस्वार्थ, निश्छल एवं निर्बाध प्रेम के
अंकुर पड़े थे वे निरन्तर प्रस्फुटित होते गए। आज की इस सामा-
जिक व्यवस्था में जहां व्यक्ति संयुक्त-परिवार प्रणाली को पिछले
युगों की एक सड़ी गली परिपाटी मानता है; श्री इन्द्रचन्द इसे
पारिवारिक सम्बन्धों की ठोस आधार-शिला मानते थे। उनका
बचपन का यह दृष्टिकोण जीवन पर्यन्त ही मार्ग दर्शक बना रहा।
आर्थिक झंझावातों ने उसे हिलाया नहीं, उल्टे उसकी जड़ें और
गहरी और मजबूत की। धर्म में अंध-श्रद्धा तो उन्होंने नहीं सीखी
किन्तु धर्म में आस्था रखना एवं सच्ची साधना करना उन्होंने
अपने जीवन सिद्धान्त बना लिए। बचपन में भी अपनी धार्मिक
क्रियाएं करना, संतों के दर्शन करना, व्याख्यानों में जाना एवं
धार्मिक पुस्तकों का अध्ययन करना उनके स्वभाव में सम्मिलित
हो गए थे। संकीर्ण परिवेश में न रहने के कारण इसी समय
उन्होंने धार्मिक सहिष्णुता के भी स्थाई भाव ग्रहण किये। वे अपने

साथियों के साथ लक्ष्मीनाथ जी के मन्दिर के उद्यान और
कोलायत तीर्थ स्थान पर जाया करते थे-- उनकी जैन धर्म में
निष्ठा अन्य धर्मों के प्रति आदर सिखाती थी न कि धार्मिक
कट्टरता एवं वैमनस्य के पाठ पढ़ाती थी। अपने धर्म में स्थिर रह
कर ही व्यक्ति अन्य धर्मों का आदर कर सकता है-- महात्मा
गांधी की इस मान्यता से श्री इन्द्रचन्द शत-प्रतिशत सहमत थे
पर वे "स्वधर्मे निधनं श्रेयं" मानते हुए भी "पर धर्मो भयावह"
की बात स्वीकार करते थे।

उनके व्यक्तित्व का "महान" स्वरूप धीरे धीरे निखरने लगा
था। जीवन की आवश्यकताएं कई बार आदमी को समय से पहले
"जवान" बना देती हैं। कई बार पेड़ पर पकने के विलम्ब को दूर
करने के लिए फलों को कृत्रिम साधनों से पकाना पड़ता है- कई
बार भट्टी की आँच में डाल कर चीजों को कान्ति दी जाती है।
बाबू इन्द्र चन्द को भी परिवारिक परिस्थिनियों ने कलकत्ता जाने
के लिए प्रेरित किया ताकि परिवार को आर्थिक सम्बल मिल सके
वे उम्र के हिसाब से "पकने से" पहले आर्थिक कारणों से "पक गए"
तथा पूर्ण उत्तरदायित्व से आजीविका के लिए कलकत्ता रवाना
हो गए। इस समय उनको आयु केवल १३ वर्ष थी।

कलकत्ता में वे महानगरीय यंत्रणाओं से पीड़ित नहीं हुए--
दिखावे के सम्बन्धों और टीपटाप के व्यवहारों से ग्रस्त नहीं रहे--
स्वार्थ लिप्सा, आपा धापी एवं उठा-पटक के नाटक से सर्वथा दूर
रह कर उन्होंने अपने जीवन को उसी बचपन की प्रयोगशाला में
सिद्ध सफल अनुभवों के आधार पर ही ढाल दिया।

प्रसंग वश यह वर्णन करना उचित होगा कि उनके कलकत्ता
प्रवास के पीछे उनके जीजाजी श्रीयुत् कपूरचंद जी बछावत का
महान योगदान था। बाबू इन्द्रचन्द अपनी बहिन वरजीबाई से स्वाभा-
विक स्नेह रखता था तथा भाई बहिन के इस प्रेम के कारण ही

वर्गीय कपूर चन्द जी वच्छावत ने श्री इन्द्रचन्द को कलकत्ते आने के लिए प्रेरित किया। अल्पायु होते हुए भी मेधावी लड़के को माता-पिता ने सहर्ष विदा किया। अब वह जीवन की विशाल कर्मशाला में उतर चुका था और अनुभवहीन होने के कारण प्रारंभिक कठिनाइयों का सामना करना अवश्यंभावी था। फिर भी कदम नहीं डगमगाए, हौसला बुलन्द रहा तथा उम्र की 'लघुता' को मनोबल की "गुरुता" ने पूरा कर दिया। कलकत्ते मे व्यक्ति का स्थानीय जीवन से अभ्यस्त होना भी अनिवार्य है। वहा जीवन प्रतिक्षण क्रियाशील, गतिमान एव परिवर्तनमय रहता है। जडता और निष्क्रियता से कलकत्ते का जीवन संधि नही कर सकता। आर्थिक परिवेश वहा माननीय सम्बन्धो का निर्धारण करता है। संवेदनाएं भी आर्थिक घेरे से घिरी रहती है। 'नमस्कार' और 'जय श्री कृष्ण' अथवा 'जय जिनेन्द्र' का भी व्यापारीकरण हो चुका है— किससे कितनी देर बात करनी है? किसका मात्र नमस्कार से अभिवादन करना है? किसके नमस्कार की उपेक्षा कर देनी है? किसके लिए मुस्कराहट बिखेरनी है और किससे रूखेपन का व्यवहार करना है— इन सब बातो के पीछे मूल भावना यही रहती है कि आर्थिक सम्बन्धो में कौनसा व्यक्ति कहां ठहरता है?

इस दम-घोटू परिवेश में भी बाबू इन्द्रचन्द ने अपनी इयत्ता को कायम रखा। कमल के समान जल से ऊपर अपनी सत्ता का उन्हें अहसास था तथा अपने व्यक्तित्व को घेरावों के दायरों से उन्मुक्त रखने मे वे समर्थ हुए। कलकत्ते के जीवन का वर्णन यथा-स्थान फिर कर दिया जायगा। यहा तो इतना कहना ही युक्तियुक्त होगा कि बाबू इन्द्रचन्द ने कलकत्ते में भी मुस्कराहटें बिखेरी, औपचारिकताओं के लबादे को नही ढोया, आत्मीयता का प्रदर्शन किया तथा मित्रों एवं परिचितो के लिए महानगरीय उपेक्षा का प्रदर्शन नही किया। कलकत्ते में जो भी उनसे मिला उनमें

किसी प्रकार का रूखापन अथवा अनमनापन नहीं पाया। वे सबसे प्रेम पूर्वक मिलते। यथाशक्ति स्वागत करते; उचित एवं अपेक्षित साथ निभाते तथा हर प्रकार से उसे अपनत्व से आकर्षित किया करते थे। उनके इस व्यवहार ने थोड़े समय में ही अनेकों प्रशंसक बना लिए थे तथा लोग उन्हें उचित प्रेम एवं सम्मान देने लगे थे। इस बीच में वे बीकानेर आते रहते थे तथा परिवार की किसी भी समस्या के आर्थिक पक्ष के लिए चिन्तित तथा सचेष्ट रहते थे। उनमें स्नेह के हिसाब से बचपन तथा जिम्मेदारी के हिसाब से प्रौढ़ता थी। वे मानते थे कि गोद चले जाने अथवा दूर रहने से निजी सम्बन्धों का निजत्व समाप्त नहीं हो जाता। खून के सम्बन्ध जरा जरा सी कठिनाइयों से ध्वस्त नहीं हुआ करते। सामाजिक रूप से यद्यपि वे अपने निकट सम्बन्धी स्वर्गीय श्रीयुत् मुन्नालालजी की धर्मपत्नी श्रीमती तीजों बाई के गोद चले गए थे पर उनके हृदय में अलगाव के अंकुर नहीं जम सके। वे अपने भाइयों से पृथक रहने की कल्पना से भी काँप उठते थे। सुख दुःख के साथी भाई ही हो सकते हैं तथा उनसे गोद के नाम पर अलग होना तो अलगाव की प्रवृत्ति के आगे आत्मसमर्पण कर देना है। यदि वे अन्य लोगों की तरह गोद के नाम पर अपने परिवार वालों से अलग हो जाते तो आर्थिक रूप से चाहे उनकी स्थिति मजबूत भले ही होती पर नैतिक धरातल पर वे अवश्य ही गिर जाते। उनमें वह "महानता" लुप्त हो जाती जिसका पूर्ण विकास हमने उनको महाप्रयाण में देखा था।

उनके अग्रज श्री बछराज सोनावत के शब्दों में बाबू इन्द्रचन्द के इस महान गुण पर इस प्रकार प्रकाश डाला गया है।

'जब श्रीमती तीजों देवी ने इन्द्रचंद को गोद लेने का विचार किया तब वह गोद जाने से इन्कार हो गया। प्रिय बड़े भाई ने उसे बहुत समझाया। आखिर उनके समझाने पर वह मान गे

या पर उसने यह शर्त रखी कि मैं आपके साथ ही रहूंगा। मैं किसी भी स्थिति में आप से अलग नहीं रह सकता।'

संयुक्त परिवार के प्रति इस अगाध प्रेम एवं महान श्रद्धा ने ही तो उन्हें ऐसा करने के लिए प्रेरित किया था। सतरह वर्ष की आयु में उनका विवाह उदयरामसर निवासी श्रीमान् सेठ मोहनलालजी बोथरा की सुपुत्री चन्द्रा देवी (उर्फ भीखी देवी) से सम्पन्न हुआ। उनका दाम्पत्य जीवन सुखी था। नव वधू श्रीमती चन्द्रा देवी परिवार के प्रेम पूर्ण परिवेश के अनुकूल सिद्ध हुई तथा पारस्परिक अक्षुण्ण स्नेह की परम्परा बनाए रखने में उन्होंने भी अपना योगदान दिया। बोथरा परिवार का यह रत्न सोनावत परिवार के हार में अपने स्थान पर जड दिया गया था और उ ने हार की शोभा बढाने का ही सतत प्रयत्न किया। श्रीमती चन्द्रा देवी यद्यपि गोद के नियमों से स्वर्गीय तीजों देवी के यहां रहने को स्वतंत्र थी तथा अपने परिवार से अलगाव के लिए न्यायोचित विग्रह करवा सकती थी पर उन्होंने स्वप्न में भी ऐसी कल्पना नहीं की। वे योग्य पति की योग्य पत्नी सिद्ध हुई।

इसका यह तात्पर्य नहीं कि श्रीमती चन्द्रा देवी ने अपने गोद लेने वाली सास की सेवा नहीं की हो। उनके हृदय में अपने पति के समान ही सेवा की उत्कृष्ट भावना थी तथा उसी से प्रेरित होकर उन्होंने अपने कर्तव्य का निर्वाह किया। कालान्तर में इन्द्रचन्द सोनावत ने अपनी रुग्ण 'माताजी' (श्रीमती तीजों बाई) की जो महान सेवा की वह सिद्ध करने के लिए पर्याप्त थी कि वर-वधू का यह युगल वस्तुत: आदर्श था तथा उनमें किसी भी प्रकार का दोष देखना कठिन था। वस्तुतः यह युगल दो परिवारों के बीच में एक पुल था; अन्य साधारण युगलों की तरह अपने ही परिवार में खाई की तरह नहीं था। तीजों देवी पक्षाघात से पीड़ित एवं दुर्दिनों का शिकार थी अतः उसे महान सेवाभावी

इन्द्रचन्द से हीरे की प्राप्ति वरदान तुल्य सिद्ध हुई। पक्षाघात
ग्रस्त प्राणी का जीवन चलता नहीं उसे घसीटना पड़ता है।
को गोते देने पड़ते हैं। शारीरिक रूप से असहाय ऐसे प्राणी
मानसिक वेदना कितनी हो सकती है यह तो घायल की गति
ही जान सकता है। जब अपने इर्द गिर्द सारा संसार गतिमान
और स्वयं की गति अवरुद्ध होगई ऐसा लगता है कि इस विश्व
हमारी कोई जरूरत शेष नहीं रह गई है; जैसे अब हम चुक
हैं; जैसे सारी परिस्थितियां हमारे विरुद्ध साक्षी दे रही हैं;
हमारा शरीर ही हमारा शत्रु बन गया है।

श्रीमती तीजों देवी का शरीर भले ही उनके विरुद्ध हो
हो, तन के कपड़ों ने भले ही विद्रोह कर दिया हो पर इन्द्रचंद
अपनी पक्षाघात पीड़ित 'माता' की महान सेवा की। उनके
भ्राता श्री बछराज सोनावत के शब्दों में—"उसकी सोता
माता तीजों देवी को पक्षाघात हो गया तब उसने बड़ी सेवा
उनके तेल मालिस अपने हाथ से करता। समय समय पर दवा
देता। अच्छे ढंग से बातें करता।" इस स्थिति को इतने संक्षेप
समाप्त नहीं किया जा सकता। पक्षाघात ग्रस्त प्राणी के
मालिश करनी पड़ती है; उसे अपने अथवा लकड़ी के सहारे
कदम कदम पर गिरते पड़ते चलाना होता। कई बार जब
प्राणी बैठ भी नहीं सकते उस समय की स्थिति वस्तुतः अत्यन्त
विषम हो जाती है। मलमूत्र निवारण भी एक समस्या बन जाती
है। बीमार के लिए निरन्तर सेवा की आवश्यकता होती है
इन्द्रचंद और उसकी धर्मपत्नि ने इन सभी अग्नि परीक्षाओं
सफलता पूर्वक सामना किया तथा समय पर औषधि एवं
उपचार करने में वे दोनों सजग, सतर्क एवं सक्रिय रहे।
की विडम्बना से कौन विमुक्त हुआ है? युगपुरुष राम भी
पिता दशरथ को बचा नहीं सके। अततः तीजों बाई भी

असार संसार को छोड़कर चली गई पर सेवा-भावना अपनी कसौटी पर सफल सिद्ध हुई। सेवा का एक और उत्कृष्ट उदाहरण इतिहास के पन्नों में जुड़ गया।

इसी प्रसंग में शहीद बाबू इन्द्रचंद की असीम सेवा-भावना का एक और उदाहरण हमारे सामने आता है। उनके कलकत्ते प्रवास में सहायक एवं स्नेहमय जीजाजी श्रीयुत् कपूरचंद जी बछावत के असाध्य रोग ने जब उग्रता धारण करली तो एक विश्वासी आत्मीय की आवश्यकता स्वतः ही उत्पन्न हो गई। रोगी तो जीवन-मरण की समस्या से जूझता ही है पर परिचर्या में व्यस्त व्यक्ति उसे निरंतर जीवन की ओर खींचने का प्रयास करता है और मृत्यु के आक्रमणों को शिथिल करता जाता है। व्याधि की विषमता को देखते हुए दिन रात सेवा की आवश्यकता थी तथा इस कार्य को बाबू इन्द्रचंद ने अत्यन्त धैर्य, साहस एवं सहन-शक्ति से सम्पन्न किया। कलकत्ते में अपना कर्तव्य-निर्वाह करते हुए भी उन्होंने इस अतिरिक्त सेवा कार्य को शीर्षस्थ महत्व दिया। वे रात रात भर जागरण करते तथा दिन को निरन्तर कार्य में जुटे रहते। इस समय उनका मात्र ध्यान अपने उपकारी जीजाजी एवं स्नेहमयी बहिन को शारीरिक एवं मानसिक व्याधियों में कमी लाने की ओर था। कलकत्ते के जीवन की विडम्बनाओं ने उन्हें अपने कर्तव्य से च्युत नहीं किया, स्वार्थ लिप्सा एवं सहज आनंद की भावनाएं उन पर कभी भी हावी नहीं हो सकी तथा निरंतर कर्तव्यपालन के क्षेत्र में वे सदैव अद्वितीय बने रहे। उनके इस चरित्र पर प्रकाश डालते हुए श्री बछराज सोनावत का कथन है कि "श्री कपूरचंद जी कलकत्ता में एकाएक बीमार हो गए। रोग ने उग्र रूप धारण कर लिया। उन्हें बड़ी अस्पताल में भरती किया गया। वह बराबर उनकी सेवा करता रहा। कई रातों तक जाग-रण किया। अपने खानपान को गौण करके उनकी सेवा में लगा

रहा पर होनी का योग था कि उन्हें बचाया नहीं जा सका।"

होनी को अनहोनी करने की शक्ति तो किसी में नहीं। मुनि वशिष्ठ एवं राजर्षि दशरथ भी इस मायाजाल से बच न सके। कर्म-गति के चक्कर ने मनुष्य की मनोकामनाओं में हमेशा बाधा डाली है।

"मुनि वशिष्ठ से पंडित ज्ञानी शोध के लगन धरी।
सीता-हरण, मरण दशरथ को वन में विपति परि॥ कर्म गति····

होनी की इस विडम्बना ने उन्हें विचलित अवश्य किया पर कर्तव्य की पुकार ने पुनः दृढ़वृती एवं क्रियाशील बना दिया। अब स्नेहमयी बहिन श्रीमती बरजी देवी के आँसू पोंछने एवं उसके परिवार की आर्थिक व्यवस्था को देखने का समय आ गया था। मृत्यु ने परिवार के सहारे को छीन लिया था-ऐसे समय बाबू इन्द्रचन्द अपना कर्तव्य पहिचानते थे। उन्होंने भावुकता का कलेवर हटा कर व्यावहारिकता का साथ दिया तथा परिवार के आर्थिक संतुलन को बनाए रखने के लिए बहिन को पूर्ण सहयोग का आश्वासन दिया। वे समय की मांग को देख कर आश्वासन देने वालों और समय के बीत जाने पर शिथिल हो जाने वालों में से नहीं थे।

अब उनका अधिकांश समय बहिन के परिवार की ओर आर्थिक दायित्व निभाने में व्यतीत होने लगा था। श्रीमती बरजी देवी ने एक साहसी महिला की तरह तुरन्त ही पापड़ का व्यावसायिक कार्य हाथ में लिया पर अनुभव की कमी एवं व्यावसायिक दक्षता का उनमें स्वाभाविक अभाव था। इस कार्य को बाबू इन्द्रचन्द ने अपने अनुभव कौशल, व्यावसायिक दक्षता एवं परिश्रम से पूरा किया तथा कुछ ही समय में आशातीत परिणाम सामने आने लगे। वे पापड़ के धंधे से सम्बन्धित हिसाब-किताब रखने, व्यापारियों से आदेश प्राप्त करने तथा तदनुसार माल मंगवाने,

नेयों एव ग्राहकों में समन्वय रखने ग्रादि सारे कार्य स्वय देखते । एक प्रकार से बरजी देवी के बीकानेर स्थित व्यवसाय के वे लकत्ता-शाखा के एक मात्र प्रतिनिधि एव हितों के सरक्षक थे। ह उनकी दक्षता का ही परिणाम था कि परिवार का ग्रार्थिक नुलन पुन: स्थापित हो सका। श्रीमती बरजी देवी के सस्मरणो े अनुसार, वह बड़ा भाग्यशाली था। मेरे व्यापारिक कार्यों में राबर सहयोग देता। अच्छा सलाहकार था। दूर बैठे रे परिवार का पूरा ध्यान रखता था। उसके स्वर्गवास का समाचार सुन कर मेरे पर वज्रपात हो गया। पर मौत के आगे चारी है।" वैधव्य या संताप भोगने वाली श्रीमती बरजी देवी के जीवन में मृत्यु ने यह दूसरा महान ग्राघात किया था— भाग्य ने उन्हें एक बार फिर चिढाया था—दुर्दैव ने एक बार फिर उनकी परीक्षा ली थी। पर यहाँ भी होनी के चमत्कार के आगे मनुष्य की तुच्छ शक्ति को मानने के सिवाय कुछ भी शेष नही रह गया था।

उनका हृदय वासन्ती पवन सा शीतल, समुद्र सा अथाह और पीपल सा पवित्र था। उनके लिए अपनी सतानों अथवा भाई-बहिन की संतानों में कोई अन्तर नही था। समान वितरण ही उनका सिद्धांत था; न्याय ही उनका नारा था तथा समभाव ही उनका ध्येय था। वे ज्यादातर पाजामे और टेरेलिन की सुहावनी ड्रेस में रहते पर कभी कभी धोती और मलमल के कलफ़दार कुड़ते में भी उनको देखा जा सकता था। यदाकदा टोपी भी धारण कर लेते पर चप्पल तो उनकी चिरसगिनी थी। वे वस्त्रविन्यास में पूर्णतः भारतीय थे; स्टाइल मे राजस्थानी और विशेष पहरावे में शुद्ध बीकानेरी थे। अपनी मातृभूमि की वेश भूषा में गौर-वर्ण एव भरे हुए शरीर के होने के कारण उनका व्यक्तित्व खिल उठा था—चेहरे पर काति और आंखों मे तेज झलकता था। उनका

ध्यान हमेशा पारीवारिक समस्याओं पर केन्द्रित रहता और जब
कभी बीकानेर आने का काम पड़ता, परिवार के प्रत्येक सदस्य के
लिए उसकी आवश्यकता की वस्तु लाना नहीं भूलते। अपने अग्रज
श्री वछराज सोनावत के ज्येष्ठ पुत्र से भी उनको काफी लगाव
था तथा उसकी आवश्यकताओं की पूर्ति करने में वे सदैव तत्पर रहते
थे। उनका पारीवारिक प्रेम संकुचित अथवा छिछला नहीं अपितु
व्यापक एवं गहरा था। पारिवारिक उपयोगिता की वस्तुओं का
सूचीपत्र उनकी जवान पर रहता; प्राथमिकताएं वे स्वयं निर्धारित
करते तथा पिता श्रीजोगीलालजी से लेकर अपनी नन्हीं-नन्हीं पुत्रियों
तक की सारी अनिवार्य वस्तुएं वे स्वयं लाते--उनकी नजर में
कोई भेदभाव नहीं पनपा था। उनका "चश्मा" धूप अथवा रंग
का नहीं, नकली अथवा दिखावटी नहीं; वरन समदृष्टि एवं सम-
भाव का था।

महान व्यक्तियों की आयु वर्षों में नहीं उनके कामों की गह-
नता से नापी जाती है। महान कामों का अन्दाज आयु की वरि-
ष्ठता से नहीं लगाया जा सकता। झांसी की रानी लक्ष्मीबाई ने
इतिहास में अपना नाम अमर कर दिया लेकिन उसके लिए उन्होंने
४०-५० वर्ष तक त्याग अथवा श्रम नहीं किया। मृत्यु के समय
उनकी आयु कुल तेवीस वर्ष की थी। वे एक ज्योति-शिखा
थी जो अपने उद्देश्य में सफल होने के वाद विश्व के पटल से
भौतिक रूप से उठ गई। अंग्रेज कवि कीट्स और शैले महान
साहित्य का सृजन करके ४०-४२ वर्षों की आयु से पहले ही विदा
हो गए। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र और जयशंकर प्रसाद ऐसे ही अन्य
उदाहरण हैं जिन्होंने लम्बी उम्र के कारण महानता प्राप्त नहीं
की। वे अपेक्षाकृत अल्पायु में ही स्वर्गवासी हो चुके थे। बीस
वर्षों की उम्र से ही पहले संसार छोड़ देने वाले महान तेजस्वी
ऐतिहासिक पुरुषों में हम सीता, वादल, अभिमन्यु आदि के नाम ले सकते

हैं। ये सब उदाहरण यह बताने में सक्षम हैं कि उम्र छोटी हो अथवा बड़ी, महानता के अंकुर प्रस्फुटित होकर पूर्ण विकास प्राप्त कर सकते हैं। इसके लिए गुणों का पुष्टता चाहिए न कि आयु की परिपक्वता; सेवा-भावना चाहिए न कि लम्बी आयु की राम-कहानी। महन-शक्ति की पराकाष्ठा चाहिए न कि लौकिक दिखावे की पृष्ठभूमि।

इन सन्दर्भों में यदि देखा जाय तो भाई इन्द्रचन्द सोनावत का जीवन कसौटी पर खरा उतरता था।

ये परम सेवा-भावी सहिष्णु एवं शीतल, सरल मधुर स्वभाव के थे। माता पिता में उनकी सेवा-भावना, भक्ति की सीमा तक पहुंच चुकी थी। छोटी उम्र में आर्थिक बोझ को सहन करने की प्रवृति के पीछे मां बाप की सेवा की भावना छिपी हुई थी। वृद्ध पिता और घर की आर्थिक स्थिति ने समय से पहले ही उनके अनुभवों को परिपक्वता दे दी थी। वे जानते थे कि उनके अग्रज श्री बछराज सोनावत राज्य-कर्मचारी हैं जो कभी भी स्थानान्तर पर अन्यत्र भेजे जा सकते हैं। कर्मचारी के लिए स्थानान्तर एक सामान्य घटना होती है और उसे अपनी सेवाओं का सरकार की इच्छानुसार किसी भी स्थान पर जाकर पालन करना होता है। श्री इन्द्रचन्द सोनावत इस स्थिति से परिचित थे पर इसका निदान भी उन्होंने सोच रखा था। इस स्थिति में मां-बाप की सेवा और राजकीय सेवा के बीच में किसी एक के चुनाव करने की समस्या थी। दूसरों के लिए यह चुनाव कठिन हो सकता है पर दृढ प्रतिज्ञ इन्द्रचन्द के लिए इसका निदान पूर्व निर्धारित एवं निश्चित था। वे मा-बाप की सेवा किसी भी अन्य सेवा से सर्वोपरि मानते थे। उन्होंने एक बार अपने पूज्य भाई को कह भी दिया था कि यदि सरकारी नौकरी में स्थानान्तर की समस्या है तो इसे छोड़ दिया जाय ताकि माता-पिता की सेवा में बाधा नहीं आवे। अग्रज बछ-

राज सोनावत ने इस सुझाव का वर्णन अपने शब्दों में इस
किया है:—

"जब मेरा तबादला होने वाला था तब मैं उदास हो
इन्द्रचन्द उस समय कलकत्ते से बीकानेर आया हुआ था।
उदासी का कारण पूछा तब मैंने बताया कि मुझे सरकार
पर बीकानेर से बाहर भेज रही है। उससे वृद्ध माता-पि
सेवा में बाधा पहुंचेगी। तब उसने कहा कि "भाईजी,
छोड़ आवें। आपको बीकानेर से बाहर जाने की जरुरत नहीं।
तक मैं जिन्दा हूं आपको व माता-पिता को घर-खर्च
रहूंगा। आपको चिन्ता करने की जरुरत नहीं है। पहले
की सेवा है, बाद में कोई दूसरा काम।"

यह केवल साधारण दृष्टान्त नहीं है; पूरा जीवन-
यह वह असाधारण सिद्धान्त है जिस पर इन्द्रचन्द के जीवन
ताना-बाना बुना गया था। यह वह भावना है जिसकी धुरी
जीवन की सारी घटनाएं चक्रवत घूमती रहीं थीं। इन्द्रच
लिए माँ-बाप की सेवा के सामने सांसारिक दायित्व
सेवा ही उसके लिए मिश्री मेवे का महा प्रसाद थी। उसने
बूढ़े माता-पिता की इच्छाओं की पूर्ति करने का सदैव ही
किया। उसके कन्धों पर आर्थिक समस्याएं सवार थीं।
भार होते हुए भी इस आधुनिक श्रवणकुमार ने कभी भी
इच्छा नहीं की। उसे पत्नी की कमनीयता अथवा बच्चों
ने कभी नहीं रोका। उसने कर्तव्य की पुकार सुनी और
में स्वतः ही रवाना हो गया। मां-बाप की सेवा को वह
नहीं मानता था। स्वयं माता-पिता की लौकिक रूप से सेवा
और उसके लिए प्रदर्शन करना उसके स्वभाव के अंग
सेवा तो उसके रक्त में घुली-मिली थी; उसके व्यक्तित्व
थी, उसके जीवन का चरम आदर्श थी। वह मां-बाप की

महमान नहीं मानता था जैसे कई आधुनिक शिक्षा प्रेमियों की मान्यता रहती है। वह गृहस्थ-धर्म के प्रवेश का अर्थ संयुक्त परिवार प्रणाली के अन्त में नहीं खोजता था। उसके भाव्य पृथक थे, उसका दर्शन अनामान्य था और उसके साधन 'पवित्र' थे। बड़े भाई श्री बछराज नोनावत ने उसकी निस्वार्थ सेवा की सराहना करते हुए लिखा है कि 'वह जब कभी कलकत्ते से आता, माता पिता की सेवा तन-मन-धन से करता। पिताजी के दो दो-घंटे मालिश करता, अपना विशेष ध्यान न रखते हुए माता-पिता की सेवा में लगे रहता। माता-पिता की सेवा ही प्रथम धर्म है— यह उसके जीवन का मूल मंत्र था।''

हम ऐसा उत्कृष्ट उदाहरण श्री ईश्वर चन्द्र विद्यासागर की मातृ-भक्ति में देख सकते हैं। श्री विद्यासागर न्यायाधीश होते हुए भी रात को अपनी माताजी के पाव दबाते और उनकी इच्छानुसार आचरण किया करते थे। श्री इन्द्रचन्द भी अपने ही ढंग से सेवा कार्य में लवलीन रहा करते थे। सेवा, साधना, सादगी, सहिष्णुता, स्नेह, श्रम, सहानुभूति आदि सात गुण उनके सतरंगी व्यक्तित्व के घटक-तत्व थे। उनमें धैर्य कूट-कूट कर भरा था। विपत्ति का सामना मुस्कराहट से करने की उनमें एक अपूर्व शक्ति थी। उनका मनोबल आपत्तियों से बढ़ता था। कठिनाइयों को तो वे मर्दानगी की परीक्षा के अवसर मानते थे। वे घरेलू कष्टों का निवारण करते, पारिवारिक सदस्यों का आत्मबल बढ़ाते व भाइयों में निष्कपट प्रेम लुटाते थे। वे एक प्रकार से स्वप्न संजोने वाले, प्रेम लुटाने वाले, मधुरता सरसाने वाले, और जीवन को सुखद बनाने वाले व्यक्ति थे। उनकी मृत्यु ने जो क्षति की, है उसकी पूर्ति होना कठिन ही नहीं असम्भव है। भाई बछराज ने उनके अद्भुत धैर्य का वर्णन अपने शब्दों में इस प्रकार किया है—''वह महान धैर्यवान था। विपत्ति के समय बड़ी हिम्मत रखता। जब कभी अपने घर

में कोई कष्ट आता वह उसको सम-भाव-पूर्वक सहन कर सबको हिम्मत बंधाता। प्रेम-भावी बातें करता। बड़ी हिम्मत से काम लेता।" धीरज की महिमा का प्रकाश गोस्वामी तुलसीदास ने भी किया है। आपत्तिकाल और धीरज दोनों एक दूसरे के परीक्षक हैं। उनके अनुसार

> धीरज, धर्म, मित्र और नारी।
> आपत्तिकाल परखिए चारी॥

धीरज और धर्म ने इन्द्रचन्द की कई बार अग्नि-परीक्षाएं लीं पर महान मनस्वी सदैव सफल होकर मुस्कराते हुए बाहर निकले। यहां तक कि उनके जीवन का ऐतिहासिक अवसान भी 'धर्म' की एक महान परीक्षा के रूप में हुआ था। उसमें सफल होकर वे अमर बन गए। एक बार मृत्यु को झटका देकर हमेशा हमेशा के लिए मौत के भौतिक चक्करों से बच गए।

यहां उनके धार्मिक जीवन का वर्णन करना भी अप्रासंगिक नहीं होगा। श्री इन्द्रचन्द जैन श्वेताम्बर तेरापंथी श्रावक थे। जैन परंपरा मानव जीवन में अहिंसा का महान प्रयोग है। अहिंसा 'मनसा वाचा कर्मणा' होनी चाहिए और यह सिद्धान्त उनके जीवन में सर्वोपरि था। वे वाणी से अथवा कर्म से किसी को भी हानि पहुंचाने अथवा किसी की भावना को ठेस लगाने की बात सोच भी नहीं सकते थे। वे मित-भाषी भले ही हों, मिष्टभाषी अवश्य थे। जैन-धर्म मानवता के महान धर्म का अंग है और बाबू इन्द्रचन्द मानव धर्म के उपासक थे। वे हंस की तरह प्रत्येक धर्म के अच्छे तत्वों को खोजते और सभी धर्मों के प्रति पूर्ण सद्भाव दिखाते थे। धर्मान्धता उनके रक्त में नहीं थी; धर्म सहिष्णुता तो उन्हें जन्म घुट्टी मिली हुई थी। उनके पिता श्रीयुत [illegible] एवं बड़े भ्राता श्री [illegible] जी अपने ग्राम में [illegible] हैं। बाबू इन्द्रचन्द ने इसी परम्परा का निर्

किया। वे यथाशक्ति किसी की सहायता करते, परन्तु दूसरों की प्रशंसा करते पर निंदा से सदैव दूर रहा करते थे। निन्दा से मन का मैल सामने आता है और जिसका मन शुद्ध हो स्फटिक मणी के समान स्वच्छ हो वह भला निन्दा-स्तुति के संकुचित दायरे में कैसे रह सकता है? निन्दक का स्वभाव मीन-मेख निकालने में रहता है, वह दूसरों का बुरा सोचता है, किसी की उन्नति में वह तिल-मिला जाता है। बाबू इन्द्रचन्द जी "सर्वे भवन्तु सुखिन सर्वे सन्तु निरामयः" की भावना में विश्वास रखने वाले थे तथा सर्व भद्राणि पश्यन्तु न कश्चिद् दुःख भाग्भवेत्' के मन मन्त्र से ही अपने जीवन को चलाते थे। वे सबकी उन्नति चाहते थे तथा गांधीजी के सिद्धान्तों के अनुसार सर्वोदयवादी थे।

श्रम का पूजन मानवता की महान सेवा है। श्रम ही महानता का मार्ग प्रशस्त करता है। श्रम का सम्मान व पुरस्कार साम्यवाद है और श्रम का शोषण ही पूंजीवाद है। श्रम आधुनिक सम्बन्धों की धुरी है। बाबू इन्द्रचन्द श्रम की साधना को सर्वोच्च स्थान देते थे। वे धार्मिक नीतियों के दायरों में किसी भी प्रकार के श्रम को हेय नहीं मानते थे। कलकत्ते के भीड़ भरे जीवन में उन्होंने श्रम की गरिमा का सफल प्रदर्शन किया और कुछ ही वर्षों में अपने मालिक के विश्वासपात्र बन गए। ईमानदारी का श्रम उनकी नीति का अंग था। उनके श्रम में कर्तव्य-निष्ठा का तत्त्व था। जो उनके लिए प्रत्येक क्षेत्र में विश्वास अर्जित करने के लिए पर्याप्त था। वह विश्वास उन्होंने १७ वर्षों तक एक ही मालिक के यहां काम करके संचित किया था और यही उनकी एकमात्र निधि भी थी। अपनी बहिन श्रीमती बरजी देवी के व्यापार का प्रतिनिधित्व वे इसी विश्वास के आधार पर करते थे। वे कर्म में आस्था रखते थे। फल की प्राप्ति ईश्वरेच्छा पर छोड़ कर शुभ कार्य के लिए निरन्तर प्रयास करते रहते थे। वे मानते थे कि पवित्र

साधनों से जो सिद्धि प्राप्त होती है वही स्थाई रहती है। अपवित्र साधन अथवा अनैतिक गठ-बन्धन भ्रष्टाचार अथवा मिथ्या-भाषण धोखाधड़ी अथवा अकारण लालच आदि उन्हें बिल्कुल ही पसन्द नहीं थे। पवित्र साधन में सिद्धि में विलम्ब हो सकता है पर अन्त वह आत्मा को संतोष देने वाली होती है। थोड़े समय से सफलता प्राप्त करने के लिए अनैतिक उपायों का अनुकरण उन्हें किसी भी रूप में स्वीकार्य नहीं था। वे मानते थे कि समय आने पर कोई काम स्वतः ही ठीक हो जाता है। वे अपने जीवन को सादगी में ढालने में सफल हुए थे। उनके क्रियाशील जीवन में उच्च विचारों के प्रति लगाव था और उन्हीं से अनुप्रेरित हो कर वे समाज में प्रतिष्ठा का अर्जन कर पाए थे। विचारों की पावनता ने उनको सदैव सुमार्ग पर चलने का संदेश दिया और वे एक आदर्श जीवन यापन करने में सक्षम हो पाए थे।

जब विचार ही सुन्दर हों तो सारी क्रियायें स्वतः ही उत्तम होती हैं। वे कुटिल विचार रख कर बाहर से भले आदमी का मुखौटा लगाने वाले व्यक्तियों में से नहीं थे। वे बाहर भीतर एक समान थे अतः उन पर दोहरे व्यक्तित्व का दोषारोपण नहीं किया जा सकता।

१३ वर्ष की अल्पायु में ही एक मालिक के यहां कार्य शुरू करके निरन्तर १७ वर्षों तक उसकी सेवा करने के दौरान उन्होंने स्वामी-भक्ति का जो प्रदर्शन किया वह अपने आप में एक अनुकरणीय उदाहरण है। उनके व्यवहार से उनके लिए मालिक के घर में एक अटूट सम्बन्ध स्थापित हो चुका था। यह सम्बन्ध स्वामी-सेवक का नहीं अपितु आत्मीयता एवं स्नेह का था। प्रेम के सूत्र में बद्ध होकर वे अपने कर्तव्य का पालन मात्र सेवा की शर्तों को पूरा करने में नहीं समझते थे। उनके लिए स्वामी-भक्ति प्राणों से भी अधिक मूल्यवान थी तथा वे उस अवसर की खोज में रहते थे कि उत्कृष्ट विश्वास सुपात्रता एवं स्वामी-भक्ति का

ण दिया जा सके।

अंतत: वह निर्णायक क्षण आ ही गया जबकि उनके सामने
न और मृत्यु में से किसी एक का वरण करने की स्थिति थी
उन्होंने जीवन के पूरे ऐश्वर्यों, ऐच्छिक सुखों, कमनीय काम-
ों एवं हास-विलास, आनन्द-उल्लास, रंग-उमंग से भरे यौवन
मृत्यु के श्री चरणों में समर्पित कर दिया। स्वामी-भक्ति के
यज्ञ में जवानी की आहुति दे दी। सेठ जयचंदलाल-भंवर
न बछावत (बीकानेर वाले) के कपड़े की दूकान पर बाबू इन्द्र
द ने आद्योपान्त काम किया। न तो मालिक ने कभी गुमास्ते
शक अथवा शंका रखी और न गुमास्ते ने मालिक से कोई
कायत ही की। दोनों पक्ष पूर्ण विश्वास से एक दूसरे का भला
हते थे। एक माने में बाबू इन्द्रचन्द ने अपने काम से मालिक के
दय में एक ऐसा स्थान बना लिया था जो स्वामी-सेवक सम्बन्धों
बहुत परे था। बाबू इन्द्रचन्द व्यापारिक दृष्टि से अपने सेठ के लिए
क अनमोल निधि के समान थे जिन्हें किसी भी हालत में वे खोना
हीं चाहते थे। ज्योतिष में विश्वास रखने वाले मानते है कि घर
र अथवा व्यापार में किसी नए व्यक्ति का आगमन शुभ अथवा
पने अशुभ फल अवश्य ही दिखाता है। जिनका आगमन शुभ होता है
वे मालिक के व्यापार की श्री-वृद्धि में सहायक होते हैं। अशुभ फल
वाले व्यक्ति मालिक को चौपट कर देते हैं। बाबू इन्द्रचन्द के
आगमन के बाद सेठ जयचन्द लाल भंवर लाल बछावत की दूकान
पर बहुमुखी व्यावसायिक प्रगति हुई और धन-धान्य में बढ़ोतरी
होती गई। सेठ अपने गुमास्ते की क्षमता पर अत्यधिक आश्वस्त
थे अतः उन्हें महान से महान उत्तरदायित्व का कार्य देने में नहीं
हिचकिचाते थे। लाखों रुपयों के कारबार को सम्भालने वाला यह
युवा व्यक्ति पाई-पाई के हिसाब में कुशल निकला। बड़ी-बड़ी
रकमों ने उनके मन को नहीं डिगाया—लक्ष्मी की चकाचौंध ने

उस पर बेईमानी को हावी नहीं होने दिया-- सेठ के अत्यधिक
विश्वास ने उसे धोखा-धड़ी के लिए लालायित नहीं किया। अपने
कठोर श्रम से अर्जित राशि ही उसको अपनी दौलत थी बाकी के
लिए तो वह जल में रहकर भी कमल को तरह निर्लिप्त ही था।
दुनियां में मालिक और गुमास्ते आते जाते रहते है। इतिहास को
उनका ध्यान रखने का समय नहीं रहता। लेकिन जब कोई
गुमास्ता (भामाशाह जैसा) अपने मालिक (प्रताप) के लिए सर्वस्व
(धन अथवा जान) समर्पित करदे तो इतिहास उसे हृदय में संजो
लेता है। यह गुमास्ता लाखों में एक था--विरला था-- सच्चा
स्वामी-भक्त और कर्तव्य परायण था। प्राणों से अधिक अपना का
ध्यान रखने वाला था अतः मनस्वी और महान था।

इन्द्रचन्द बहुरंगी व्यक्तित्व के धनी थे। हम उनमें प्रत्येक
गुण का चरमोत्कर्ष पाते हैं। माता-पिता की सेवा के क्षेत्र में वे
श्रवणकुमार से होड़ लेते दिखाई देते हैं तो मालिक की स्वामि-
भक्ति में वे सर्वस्व समर्पित करने वाले झाला सरदार की तुलना
में खड़े हो जाते हैं। आदर्श-पुत्र, आदर्श-मित्र, आदर्श-भाई, आदर्श
पति--वे सभी क्षेत्रों में पूर्ण रूपेण एक आदर्श चरित्र थे। उनकी
सबसे बड़ी परीक्षा की घड़ी उस समय आई जब उनके सामने सेठ
की एक बहुत बड़ी रकम की रक्षा का प्रश्न उभर कर आया। वे
चाहते तो आत्मरक्षा के नाम पर रकम का मोह छोड़कर प्राण
बचा सकते थे पर उन्होंने ऐसा नहीं किया। वे मां मरुधरा के
सपूत थे और उन्हें नमक का मूल्य ज्ञात था। जिसका नमक
खाया उसे उसका प्रतिफल देना आवश्यक था अतः उन्होंने
जान-बूझ कर मौत का आलिंगन किया--बिना शिकायत के, बिना
तनाव के, बिना स्वार्थ अथवा मोह के। वे वीतराग की तरह
मुस्कराते हुए अपने अवसान को स्वेच्छा से स्वीकृति दे गए।
दिशाएं इस मौन-साधना एवं अमर बलिदान की साक्षी हैं।

च्छा से मृत्यु की स्वीकृति एक साधारण बात नहीं है। वे जान-बूझकर अपने ही मृत्यु-वारंट पर हस्ताक्षर कर रहे थे। परिणामों से परिचित होकर भी वे विचलित नहीं हुवे – यही उनकी महानता का प्रमाण है। यौवन के उत्कर्षकाल में उनका निधन वैसे अत्यन्त घातक एवं शोक-पूर्ण था पर उन्होंने मर कर जो मार्ग प्रशस्त किया वह सदियों तक तक उनका स्थान इतिहास में सुरक्षित रखने में पर्याप्त है। यह प्राणोत्सर्ग ऐतिहासिक था—इसके पीछे मरुधरा के बलिदानों की एक लम्बी परम्परा थी। आज के भौतिकवादी युग में स्वामी भक्ति के नाम पर इतना बडा बलिदान विश्वास करने की बात नहीं है पर बाबू इन्द्रचंद ने सतयुगी परम्परा का निर्वाह करके अपने कर्तव्य का पालन किया।

उन्होंने अपने कलकत्ते के प्रवास काल में स्नेह एव सौजन्यता से अपने लिए अमिट स्थान बना लिया था। जनता के दिल में उनके प्रति स्वाभाविक प्रेम था। वे कलकत्ते की छलछद एव पाप-प्रपंच की दुनियां से बिल्कुल दूर थे। वे इन्सानियत का मूर्तरूप थे अतः उनके गुणों का प्रभाव होना स्वाभाविक था। कलकत्ते के प्रवासी मारवाड़ी लोगों के हृदय में बाबू इन्द्रचंद के प्रति महान अनुराग था और इसका पुष्ट प्रमाण उनकी मृत्यु के उपरांत हमें देखने को मिला। लोगों ने उनके प्रति जो श्रद्धा अभिव्यक्त की वह उनकी ईमानदारी, निष्ठा एवं स्वामीभक्ति के प्रति महान श्रद्धाञ्जलि थी।

चतुर्थ परिच्छेद

भीड़ भरे जीवन में एक महान आहुति

कलकत्ता नगर······जहां का जनजीवन चकाचौंध, भीड़भा[ड़] आपाधापी और जल्दबाजी का है। 'रात के मुर्दे'[1] सवेरा हो[ते] ही फुटपाथों, राजपथों तथा सड़कों पर चलने लगते हैं। कारखानें मिलों, दफ्तरों, बाजारों, गोदामों, खानों और खलिहानों में इन्सा[न] कीड़े किलबिलाने लगते हैं। सभी जगह जिन्दा रहने की हो[ड़] लगी हुई है। इस होड़ में संघर्ष, मारकाट, हत्याएं सभी [कुछ] जायज है। जिन्दा रहने की अहम् समस्या के आगे सारे नात[े] सही हैं। यहां प्रत्येक आदमी का दृष्टिकोण सीमित है······सं[बंध] रिस्ते-नाते-आर्थिक दायरे में बंधे हुए हैं। लोगों की नसों में मान[] वता का दूध नहीं बहता—सब अपने आप मे मस्त हैं। सीमि[त] परिवेश में बंधी ये "बंद गोभियाँ"[2] अपने स्वार्थों से इतर कोई बात नहीं सोच सकती। यहां परिचय पैसों का है; मानदंड आर्थि[क] हैं; सम्बन्ध भौतिक हैं। कलकत्ते में अपने ही पराये हो जाते तथा जान पहचान "जै श्रीकृष्ण; जयराम जी; जय जिनेन्द्र अथ[वा] गुड मॉनिंग तक सीमित रह जाती है। कलकत्ते की हवा में अलगा[व] है—अलगाव भाई-भाई का, बाप-बेटे का, दोस्त-दोस्त का। उ[क्ति] प्रसिद्ध है कि:

> कलकत्ते का धागा।
> बेटा बाप से न्यारा॥

---

1. 'रात के मुर्दे' का प्रयोग श्री हरीश भादानी की एक कविता से साभार
2. 'बंद गोभियाँ' का प्रयोग श्री [illegible] शर्मा की एक कविता से साभार

यह गुण है इस धरती का; जहां आत्मीयता या मैत्री-प्रदर्शन को व्यर्थ बकवास मानी जाती है। कलकत्ते के जीवन में प्यार-मुहब्बत जैसी इन्सानी चीजों के लिए समय की "फिजूल खर्ची" बेवकूफी की श्रेणी में आती है। यहां मनुष्य का परिचय गुणों अथवा सद्कर्मों से नहीं, बैंक-बैलेंस और हार्ड-कैश से होता है। किसी की मनुहार करने के पीछे भी कुछ न कुछ बिजनिस जुड़ा रहता है। स्वागत समारोह, अभिनंदन, प्रशंसा और यहां तक कि शोक संदेशों में भी कुछ न कुछ व्यापारिक उद्देश्य अवश्य ही छिपे रहते हैं।

कलकत्ता नगर······महानगरी अवगणाए यहां इन्सानों को हर घड़ी सताती हैं। यहां वर्षों तक एक ही वाड़ी अथवा फ्लैट में रहने वाले पड़ोसी एक दूसरे के अपरिचित हैं—यहां का आदमी मशीन का पुर्जा है जिसकी सप्लाई 'रेडीमेड" होने के कारण हर समय हो सकती है। 'पुर्जे' बदलते रहते हैं, मशीन चलती रहती है, मौत अथवा जिन्दगी इस व्यवस्था में कोई अन्तर नहीं ला सकती। यहां आत्मीयता मूर्खों के शब्द-कोश में ही मिलती है— अ नित्व पुरातत्व विभाग मे सुरक्षित है—प्रेम, भाई चारा और मानवता लोगों को गुमराह करने वाले नारों के रूप में प्रचलित हैं।

कलकत्ता नगर······यहां फैक्टरियों में नई सभ्यताए ढलती हैं। कारखानों को भट्टियां अविश्वास, छलछंद, कुटिलता एव विश्वासघात का धुआ उगलती हैं। खेतों मे शैतानियत की फसलें लगती हैं। मानवता के सारे दायरों का आर्थिक जकड़ में लपेटे यह भौतिकवादी का विषधर पूरे शहर के वातावरण को विषाक्त बनाता जा रहा है। पाप, शोषण और बिजनिस जैसे शब्द एक दूसरे के पर्याय बन गए हैं। दूसरों को जितना अधिक उल्लू बनाया जा सके उतना ही अधिक एक व्यक्ति समझदार माना जाता है। यह है यहां का परिवेश—यह है यहां के जन जीवन की झांकी—यह

है यहां इन्सानों की हालत।

कलकत्ता शहर······यहां बंगलों की कतारें ट्यूबलाइट्स की चमचमाहट······ मोटरों की रेलमपेल ······ फैशन परस्ती के जादू······फिल्मी पोस्टर······सभा, सम्मेलन उपदेश आदि सब है पर सभी जगह जिस चीज की बड़ी भारी कमी है वह मानवता है। यहां शोषण का पोषण होता है। यहां व्यक्ति-व्यक्ति के बीच केवल आर्थिक सम्बन्धों का पुल है अन्यथा हर जगह बड़ी बड़ी खाइयां हैं। किसी को फुर्सत नहीं कि किसी के दुःख दर्द को सुनें अथवा किसी के आंसू पोंछें या किसी को सांत्वना दें।

कलत्ता शहर······जहां मुर्दों को जलाने में 'लाइनें' लगती हैं······श्मशान हर समय 'जलते' रहते हैं······चौबीस घंटे काम चलता है दफ्तरों में, फैक्टरियों में, मिलों में, अस्पतालों में······ मशीनें और आदमी एकाकार बन चुके हैं।

इसी कलकत्ते शहर में बाहरी तड़क-भड़क, ऊपरी टीपटाप बिजनिसी-मुस्कान; दिखावे की सहानुभूति और औपचारिक मेहमानवाजी आदि से दूर बाबू इन्द्रचंद सोनावत ने अपने जीवन के अमूल्य १७ वर्ष व्यतीत किए। ये ऐतिहासिक १७ वर्ष उस [illegible] नियत को समर्पित थे। इसी बीच उनकी महानता की भूमिका बनी और शहादत की पटकथा लिखी गई। इस दीर्घ-काल में बाबू इन्द्रचंद ने सबको प्यार दिया, मानवता की मुस्कानों से [illegible] सभी लोगों का स्वागत किया—सभी का यथायोग्य सत्कार किया—सबको अपनत्व के गुरुत्वाकर्षण से अपनी ओर खींचा। उनके पास परिचितों के व्यक्तिगत दुःख दर्दों को बांटने का समय था—बीकानेर से आए पुराने दोस्तों, सम्बन्धियों तथा [illegible] वालों का सम्मान पूर्वक स्वागत करने की लगन [illegible] कष्ट भोग कर भी दूसरों का भला करने की [illegible] थी। बीकानेर से जो भी परिचित व्यक्ति कलकत्ते आता [illegible]

उस नगर की कई मधुर-कटु स्मृतियों के साथ बाबू इन्द्रचंद के सहवास अथवा मिलन के मधुर संस्मरण लेकर आता।

कलकत्ते के 'किटाणुओं' का उन पर असर नहीं हुवा था। उन पर वह महानगरीय छाया नही पड़ी थी जो अन्य साधारण प्रवासी भाइयों को ग्रस्त कर लेती है। उनकी सेवाभावना पूर्ववत् एवं प्रगाढ़ थी। अपने जीजाजी की असामयिक मृत्यु से पूर्व उनकी बीमारी के समय वे सेवा के सफल अग्नि-परीक्षण में से निकल चुके थे। कठिनाइयों ने उनको कुन्दन बना दिया था। अब वे किसी भी कसौटी पर खरे उतर सकते थे।

सेठ जयचन्दलाल भवरलाल के फर्म पर निरन्तर १७ वर्षों तक कार्य करके उन्होंने व्यावसायिक दक्षता प्राप्त की तथा उसका सफल प्रयोग जीवन के विभिन्न क्षेत्रो मे किया। श्री इन्द्रचंद ने प्रारम्भ से अन्त तक अपनी वफादारी का प्रदर्शन किया।

महान अवसान

कलकत्ता पश्चिमी बंगाल की राजधानी है तथा भारत में [illegible] ना शहर है। दूसरे शहरों के अनुपात में [illegible] रक्त अपराध वृत्ति, गुंडागर्दी एवं कानून [illegible] अधिक है। कलकत्ते से निकलने वाले दैनिक सन्मार्ग के १२ अप्रेल १९६६ के अंक के अनुसार अपराध-वृति का यह क्रम उन क्षेत्रों में भी फैल गया है जो अपेक्षाकृत 'सुरक्षित' माने जाते थे। बड़ा बाजार एक ऐसा अजेय गढ रहा है, जहां अवांछनीय तत्वों का भी ऐसा साहस नहीं होता था कि वे कोई ऐसी वारदात कर बैठें जिससे इस क्षेत्र के नागरिकों मे आतंक और असुरक्षा की भावना घर कर सके। पिछले कुछ दिनों से इस क्षेत्र में भी ऐसे तत्व और गुण्डे सक्रिय होगए हैं। छुरा घोपना, सने सड़क लूट लेने अथवा बम निक्षेप के समाचार बराबर मिलते

रहते हैं। इन घटनाओं और दुष्कांडों से चिंता होनी स्वाभावि
है।" .... पिछले कुछ वर्षों से बड़ा बाजार क्षेत्र में ऐ
घटनाएं यदाकदा ही सुनने में आतीं थीं। पर अब तो धीरे
यह नित्य का घटनाक्रम होता जा रहा है।"

'सन्मार्ग' के इस अंक में बाबू इन्द्रचंद सोनावत की मृत्यु
सिर्फ तीन दिन बाद तक की स्थिति का वर्णन किया गया है।
तत्कालीन आतंक और असुरक्षा के वातावरण में बहुत कम व्यक्ति
ही पूर्ण ईमानदारी का प्रदर्शन कर सकते थे। जब व्यक्ति प्राण
रक्षा में भी आश्वस्त न हो तो फिर ईमानदारी, वफादारी अथवा
कर्तव्यपालन की बातें सोची भी नहीं जा सकती। बीकानेर से
सैकड़ों कोसों दूर कलकत्ते में स्थित कोई व्यक्ति आतंक, असुरक्षा
एवं जघन्य प्राणघातक गतिविधियों के होते हुए भी अपने कर्तव्य
पर अड़ा रहेगा-- यह कल्पना करना कठिन ही नहीं असंभव
प्रतीत होता था। सब के लिए आत्म-रक्षा का प्रश्न सर्वोपरि
होता है। मालिक गुमास्तों के रिश्ते 'जीवन' के हैं 'मृत्यु' के द्वार
में जाकर उन्हें नहीं निभाया जाता।

आतंक का यह वातावरण और कलाकार स्ट्रीट का वह
दुर्भाग्यपूर्ण दिन ...... वैसे तो घटना आकस्मिक सी लगती है
पर उसके पीछे पूर्व निश्चित योजना एवं सुनियोजित षड्यंत्र
था। हत्या, आगजनी, छुरेबाजी, ठगी, लूट आदि घटनाओं से
जनमानस त्रस्त हो चला था। निरंकुश गुंडे कानून का नंगा
उपहास करते प्रतीत होते थे। उनके अवांछित कार्यों में
अधिक स्वतंत्रता, आशंका का वातावरण उत्पन्न कर रही
इस अराजकता की गूंज विधान-सभा तथा लोक सभा एवं राज्य
सभा में भी यदाकदा सुनाई देती थी।

हमारे चरित्र नायक के महान बलिदान से दो दिन पूर्व
घटनाओं का यदि जायजा लिया जावे तो इन आकस्मिक घट

ो विनीपिरा को और अधिक अच्छी तरह से समझा जा सकता है। ये घटनाएं तीन स्थानों पर अपनी करवटें ले रही थी। बीकानेर में जहां रहन-सहन का वातावरण था वहां गगहा (मुर्शिदाबाद) एवं कलकत्ते में उत्सुकता-पूर्वक प्रस्थान सम्बन्धी तैयारियां हो रही थी। उधर विधि के अज्ञात हाथ एक नए दिनाशम की पृष्ठ भूमि रखने में व्यस्त थे। बाबू इन्द्रचन्द सोनावत दो दिन बाद ही बीकानेर प्रस्थान करने वाले थे। तत्सम्बन्धी तैयारियां पूर्ण हो चुकी थीं पर किसे ज्ञात था कि यह प्रस्थान एक "महा प्रयाण" बन कर हमेशा-हमेशा के लिए "प्रस्थान बन जाएगा।

इन्द्रचंद के जीवन को निश्चित दिशा देने का श्रेय उनकी अग्रज बरजो बाई एवं जीजाजी श्रीयुत् कपूरचंद जी बछावत को है। श्रीयुत् कपूरचंदजी के असामयिक निधन से घटनाओं ने जो नई मोड़ ली उनमें श्री इन्द्रचंद ने अपने दायित्वों का जिस तरह पालन किया उसका वर्णन तो ऊपर कई स्थानों पर किया जा चुका है। नवीन बात यह थी कि श्रीमती बरजो बाई की सुपुत्री कुमारी पुष्पा के शुभ विवाह की तैयारियां जोरों पर थी तथा उसी प्रसंग में श्री इन्द्रचंद को बीकानेर आना था। ननिहाल की तरफ से होने वाली कई "रस्मों" को पूर्ण करने एवं विवाह में उपस्थित रहने के लिए वे आवश्यकता की वस्तुओं को लेकर बीकानेर आने को तैयार हो रहे थे। बीकानेर में श्री जोगीलाल जी सोनावत (ननिहाल पक्ष) एवं श्री कपूरचंद जी बछावत के भवनों पर मंगल-गीत गाए जा रहे थे। विवाह सम्बन्धी तैयारियां दिन-रात उत्साहपूर्वक पूरी की जा रही थी। दोनों घरों की महिलाए बड़ियां, पापड़, अथवा अन्य मांगलिक वस्तुए बनाते समय अथवा मंडप में पहनाने के वस्त्र तथा अन्य देय पदार्थों को बनाते अथवा मंगाते समय हर्षोल्लास से विवाह सम्बन्धी गीत गाते अपने कार्य कर रही थी।

वातावरण में पूर्ण प्रसन्नता एवं हर्ष की धाराएं प्रवाहित हो रहे थे
सबकी आंखें भाई इन्द्रचंद एवं सुन्दरलाल के बीकानेर आगमन
की ओर लगी हुई थी तथा सभी क्षेत्रों में उत्सुकता- पूर्ण प्रतीक्षा
की जा रही थी। परम्परागत रीति-रिवाजों में कन्या के विवाह
अवसर पर "मामों" की उपस्थिति कितनी आवश्यक है यह
किसी से भी छिपी हुई बात नहीं है। यहाँ हम नरसी मेहता के
माहेरे के प्रसंग में भगवान श्री कृष्ण के ननिहाल पक्ष की तरफ से
आने की इतिहास प्रसिद्ध अथवा पौराणिक कथा से भी ऐसे अव-
सरों का महत्व समझ सकते हैं। श्री इन्द्रचंद की प्रतीक्षा अधिक
होने का एक कारण यह भी था कि श्रीकपूरचंदजी के परिवार से उनका
घनिष्ठ आत्मीय सम्बन्ध था तथा उस परिवार के व्यावसायिक
दायित्वों में भी उनका सर्वाधिक हाथ रहा था। मंगल-गीतों के
इस वातावरण में उनका आगमन मिश्री-मेवे के मिश्रण की तरह
था। उनके बीकानेर आगमन की तिथि निश्चित हो चुकी थी
विधि के अज्ञात हाथ एक ऐसे व्यूह की रचना करने में लगे थे
जो सारी घटना के कलेवर को बदल सके। इस व्यूह रचना के
अनुसार श्री इन्द्रचंद के आगमन से एक दिन पूर्व उसके [illegible]
में दर्दनाक समाचार आने की व्यवस्था थी।

हम बीकानेर के इस हर्षोल्लास पूर्ण वातावरण को छोड़कर
कुछ देर के लिए कलकत्ता एवं मुर्शीदाबाद के जगड़ा नामक
स्थानों पर चले चलते हैं। बरजी बाई के छोटे भाई श्री सुन्दर-
लाल मुर्शीदाबाद में जगड़ा नामक स्थान पर रायजी श्री [illegible]
लाल जैन के तेल मिल में कार्य करते हैं। यह है आज के युग की
आर्थिक विभीषिका जो एक भाई को जगड़ा—दूसरे को [illegible]
तीसरे को दिल्ली और चौथे व पांचवें को बीकानेर रहने के लिए
विवश करती है। संयुक्त परिवार प्रणाली में भी [illegible]
[illegible] भारतीय संस्कृति की विजय ही मानी जाती [illegible]

सेठिया-परिवार इस बात का साक्षी है कि विपरीत परिस्थितियों में भी संयुक्त परिवार प्रणाली सभी झंझावातों का सामना करके भी विकसित हो सकती है। ये दोनों प्रवासी भाई सर्व श्री इन्द्रचन्द और सुन्दरलाल अपनी बहिन के घर में होने वाले उत्सव में भाग लेने के लिए पूर्णरूपेण तैयार थे महाप्रयाण से दो दिन पूर्व ही श्री इन्द्रचंद ने अपने बड़े भाई से मिल कर आगे के कार्यक्रम की पूर्ण व्यवस्था की थी। श्री सुन्दर लाल खगड़ा से कलकत्ता इसीलिए आए थे ताकि दोनों के साथ-साथ बीकानेर प्रस्थान की तिथि तय करलें तथा आवश्यकता की वस्तुओं को खरीदने का कार्य पूरा कर लें। विधि के अज्ञात कार्यक्रम का यह भी एक महान उपहास था कि जो भाई दो दिन पूर्व अपने छोटे भाई से परामर्श करने आया था उसे ही अन्त्येष्ठी का दु:खद कार्य अपने ही हाथों पूरा करना था या यों भी कहा जा सकता है कि महाप्रयाण से पूर्व कर्म-गति इन दो भाइयों को अंतिम बार मिला रही थी। यह विदाई के लिये मिलन था अथवा मिलन में विदाई थी—यह बात तो दो दिन बाद ही सामने आई पर उस समय तो दोनों भाई यह कह कर विदा हुये कि दो दिन बाद साथ-साथ बीकानेर चलेंगे। दो दिन बाद उनका 'साथ' हुवा भी पर वह उस समय हुवा जब एक की पार्थिव देह को अग्नि के समर्पण करने की भूमिका दूसरे को निभानी पड़ी। वार्तालाप से निश्चित एवं आश्वस्त भाई सुन्दरलाल तो पुन: खगड़ा चले गए और इधर इन्द्रचन्द अपने कार्य में लग गए ताकि योजना को मूर्तरूप दिया जा सके।

कलकत्ते में विधि का नाटकीय-कार्य एक अन्य ही घटना को जन्म देने में लगा था। सेठ श्री जयचंदलाल भंवरलाल की दूकान पर उसी दिन अर्थात् ६ अप्रेल १९६६ बुधवार को दूकान के नव-वर्ष समारोह का आयोजन था। सेठ व गुमास्ते सभी अपने-अपने निश्चित कर्तव्यों के पालन में व्यस्त थे। किसी को भी आनेवाली

दर्दनाक घटना का कोई संकेत तक नहीं था। उधर गुंडे-तत्व भी अपनी योजना बनाने में तत्पर थे। उन्हें ज्ञात था कि इस दुकान की दिन भर की बिक्री की राशि अवश्य ही घर ले जाई जाएगी तथा ये असामाजिक तत्व उसी पर अपनी आंख गड़ाए बैठे थे। उनके सामने मानव-जीवन के मूल्य की समस्या नहीं थी। वे गैर कानूनी रूप से उस राशि पर आधिपत्य करना चाहते थे जो उनकी नहीं थी। इस योजना पर विस्तार से विचार किया गया होगा तभी तो घटनास्थल पर इतनी शीघ्रता से वह कार्य संपादित कर दिया गया जो साधारण सावधानी से संभव नहीं हो सकता था। बड़े बाजार और कलाकार स्ट्रीट में जहां भीड़-भाड़ भरा जीवन है, वहां सबके सामने वह कुकृत्य किया गया इससे स्पष्ट हो जाता है कि गुंडों की वह योजना पूर्व निर्धारित एवं सतर्कता व योजना बद्ध थी। आज तक पुलिस द्वारा उन असामाजिक तत्वों को नहीं पकड़ सकने की स्थिति भी यही बताती है कि योजना के पीछे पूर्ण सावधानी के साधन अपनाए गए थे। एक बात निश्चित है कि यह कोई राजनीतिक हत्या का आयोजन नहीं था और न ही किसी की चारित्रिक हत्या की जाने वाली थी। इसमें स्पष्टरूपेण किसी ऐसे गिरोह का हाथ था जो कि इसी उद्देश्य के लिए प्रशिक्षित असामाजिक तत्वों से बना हुआ था।

श्री इन्द्रचंद को ९ अप्रेल १९६९ की संध्या तक इस बात का आभास नहीं था कि होनी उनके साथ क्या मजाक करने जा रही है। उनके दिमाग में तो बीकानेर जाने सम्बन्धी योजना थी ताकि वे अपनी उपकारी बहिन का किसी न किसी प्रकार मनोबल बढ़ा सकें। मृत्यु के कदम तेजी से उनकी तरफ बढ़ रहे थे और वे जीवन की सुखद घड़ियों के स्वप्न संजोने में लगे हुए थे। वे उस महान अवसान के दिन भी अपने मित्रों एवं आत्मीयों से उसी प्रसन्नता से मिल रहे थे जैसे हमेशा मिला करते थे। इन्द्र

से सिर्फ घंटे भर पहले ही वे श्री घनजी गांधी से मिले थे और दोनों को ज्ञात नहीं था कि कुछ ही देर में विधि की विडम्बना कोई नाटकीय स्थिति लाने वाली है। घनजी गांधी के साथ सामान्य रूप से अल्पाहार करके श्री इन्द्रचंद पुनः दूकान के कार्य में व्यस्त हो गए। दिन भर की आय का हिसाब लगा कर उसे घर पर ले जाने के लिए थैली में रख दिया गया। सन्मार्ग के १२ अप्रेल १९६६ में वर्णित स्थिति के अनुसार कोई भी व्यापारी एक बड़ी रकम दूकान में रात भर के लिए रखने को तैयार नहीं हो सकता था अतः यह तय किया गया कि यह रकमसेठ श्री जयचंद-लाल भंवरलाल के घर पर पहुंचादी जावे। आशंका और आतंक के वातावरण में यही उत्तम था कि इस राशि का सुरक्षित स्थान पर ले जाया जावे। अपने १७ वर्षों के अनवरत एवं विश्वस्त सेवाकाल में बाबू इन्द्रचंद ने सेठजी का सर्वोपरि विश्वास अर्जित किया था। वे अपनी निष्ठा, स्वामीभक्ति एवं कर्तव्य-पालन के लिए पूरे बड़े बाजार में प्रसिद्धि प्राप्त कर चुके थे। यह स्वाभाविक ही था कि इस बड़ी रकम को उनके सुपुर्द कर दिया जावे ताकि पूर्ण सुरक्षा के साथ यथास्थान पहुच सके। कलकत्ते में बड़ी फर्मों पर लाखों रुपयों का व्यापार होता है और इतनी राशि का लेन-देन कोई बड़ी बात नहीं थी पर उसे एक स्थान से दूसरे स्थान लेजाने की आशंका तो थी ही। मारवाड़ी व्यापारियों में अधिकांश कार्य विश्वास के ऊपर होता है। सेठजी के भानजे के साथ यह काम बाबू इन्द्रचन्द को सुपुर्द किया गया। कलाकार स्ट्रीट भीड़-भाड़ का स्थान है तथा सायंकाल ८-८॥ बजे, जब कि सारी दूकानें खुली हों तथा ग्राहकों की भीड़-भाड़ बनी हुई हो, दो तीन व्यक्ति कुछ रकम साथ में लेकर इधर उधर जावें तो सामान्यरूप से खतरे की आशंका की नहीं जा सकती। बड़े बाजार व कलाकार स्ट्रीट में तो करोड़ों रुपयों का व्यापार बिखरा हुआ है

तथा ऐसी रकमें तो बैंक से लाने ले जाने का काम पड़ता ही रहता है। बाबू इन्द्रचन्द व उनके साथी पूर्ण आश्वस्त रूप से वह रकम लेकर रवाना हुए। ऊपर स्पष्ट कर दिया गया है कि मृत्यु की अज्ञात योजना के कर्मचारी-पार्षद कुछ गुण्डे-तत्व पहले से ही इस फिराक में थे कि कब ये लोग रकम लेकर दूकान से निकलें और कब दुष्ट-योजना को कार्यान्वित किया जा सके। वे अपनी पूर्ण तैयारी व भागने की योजना के साथ घटनास्थल पर तैयार खड़े थे। हो सकता है कि संभवतः उनको काफी देर प्रतीक्षा करनी पड़ी हो अथवा हो सकता है कि उनका शिकार आशा के विपरीत कुछ देर पहले ही घटनास्थल पर पहुंच गया हो। यह बताना कठिन है कि इस गुंडा दल में कितने व्यक्ति प्रत्यक्ष रूप से सम्मिलित थे तथा कितने परोक्ष रूप से पर्दे के पीछे उनकी सहायता में लगे थे। उनके पास घटना के उपरान्त भागने के लिए क्या साधन थे–इसकी भी मात्र कल्पना ही की जा सकती है। भारत में पश्चिमी बंगाल की गुप्तचर शाखा अपनी सक्रियता के लिए प्रसिद्ध है। पर इतिहास की इस काली घटना पर पड़े हुए परदे को उठाने में वह भी अब तक असमर्थ रही है–यह एक सर्व विदित तथ्य है। उस अज्ञात भूमिगत गुंडा दल को अब तक गुप्त ही रहने दिया है तथा उनके काले कारनामें दंड-विहीन स्थिति में रहे हैं। इस महान अवसान के बाद पूरे कलकत्ते में स्थान २ पर सभाएं करके मांग की गई तथा विधान-सभा में भी प्रश्न उठाए गए पर गुण्डों को दंड देने में सफलता नहीं मिली।

दुखान्त नाटक की पृष्ठ भूमि बन चुकी थी तथा खलनायक मंच पर आ चुके थे। हमारे चरित्र नायक बाबू इन्द्रचंद भी अपनी स्वाभाविक प्रसन्न मुद्रा में दुकान से घटनास्थल की ओर चल पड़े मृत्यु के हाथ जीवन को वरमाला पहनाने की ओर बढ़ गये एक महान बलिदान का क्षण शीघ्रता से आगे आ रहा था।

कलकत्ते का सामान्य जन जीवन प्रवाहगति से चल रहा था। बाबू इन्द्रचंद का प्रत्येक बढ़ता हुआ कदम मृत्यु की सीमा के नजदीक आ रहा था। ऐसी स्थिति में भी आशंका अथवा आंतक की छाप उनके मानस पर नहीं थी। उनका तो मात्र ध्येय यही था कि सेठ की रकम उनके घर पर सुरक्षित रूप में पहुंच जावे ताकि वे अपने अन्य आवश्यक कार्य में लग सकें।

हमारे देश में राजनीतिक हत्याकाण्डों की पुनरावृतियाँ हुई हैं। प्रार्थना सभा में महात्मा गांधी के बीभत्स हत्याकाण्ड के बाद पंजाब के भूतपूर्व मुख्य मंत्री श्री प्रतापसिंह कैरों की दिनदहाड़े हत्या इतिहास की रोमाञ्चकारी घटनाएं हैं। कलाकार स्ट्रीट की घटना इसलिए अभूतपूर्व है कि इस इलाके में यह संभवतः प्रथम हत्याकांड था। साथ ही इसके पीछे कोई राजनीतिक उद्देश्य भी नहीं था। यह हत्याकांड अकेले में गुपचुप नहीं हुआ— भीड़-भाड़ भरे बड़े बाजार में उस समय हुआ जब दुकानें खुली थी, टैक्सियों एवं पैदल यात्रियों की भीड़ इधर से उधर जा रही थी, सामान्य जीवन पूरी गति से चालू था। उस रात बाजार में अधिक भीड़ होना भी स्वाभाविक है क्योंकि दूसरे दिन अर्थात् ८ अप्रेल १९६९ को बंगाल बंद की घोषणा हो चुकी थी और लोग अपनी आवश्यकता की चीजें खरीदने के लिए दुकानों में भीड़ लगा रहे थे। चूंकि ८ अप्रेल के बंगाल बन्द के पीछे पश्चिमी बंगाल सरकार का सहयोग था अतः एक दिन पूर्व संध्या के समय बाजार में भीड़ होना स्वाभाविक ही था।

हम नहीं कह सकते कि गुंडों का मात्र लक्ष्य रकम को लेकर भागना ही था अथवा उससे भी आगे था। यह अवश्य सत्य है कि वे रकम की प्राप्ति लिए भय का वातावरण बनाना चाहते थे। उनके पास छुरे एवं हथगोले आदि सभी उपकरण थे। संभवतः छुरा दिखाने मात्र से ही उनको लक्ष्य की प्राप्ति हो जायगी—

यह उनकी धारणा रही होगी। दुकान की बड़ी रकम की थैली सेठ के भानजे श्री राजकुमार कोचर के हाथ में थी। दोनों विश्वस्त साथी एक साथ कुछ आश्वस्त से पर फिर भी चौकन्ने से आगे बढ़ रहे थे--आश्वस्त इसलिए कि वह प्रथम अवसर नहीं था कि वे रकम को इधर से उधर ले जाने का काम कर रहे हों--यह तो होता ही रहता था। चौकन्ने इसलिए थे क्योंकि गुंडागर्दी आदि की खबरें वातावरण में फैली हुई थीं।

एकाएक उन्हें गुंडों का दल दिखाई दिया। गुंडों की संख्या बताना अथवा उनके बारे में अधिक बातें लिखना मात्र कल्पना का विषय होगा और चूंकि पुस्तक के लेखन में हमारा उद्देश्य यथार्थ चित्रण करना है अतः कल्पना की उड़ान से हमें परे रह कर ही वर्णन करना युक्तियुक्त लगता है। गुंडों को देखते ही उनकी प्रथम मानसिक प्रतिक्रिया रकम को बचाने की हुई।

वे आने वाले भय की आशंका से ग्रस्त हो चुके थे फिर भी दोनों ने परिस्थिति के अनुसार तुरन्त ही आत्मसमर्पण नहीं किया। गुंडों ने रकम की मांग करने के साथ ही छुरे निकाल लिए। दूसरी तरफ से प्रतिरोध होना स्वाभाविक ही था—एक तरफ गुंडागर्दी का नग्न नृत्य था जबकि दूसरी ओर उसका सामना करने एवं कर्तव्य पालन करने की भावना उमड़ रही थी। छुरे का एक वार हुवा - सेठ के भाणजे पर क्योंकि रकम की थैली उनके पास ही तो थी। बाबू इन्द्रचांद उस दृश्य से न तो किंकर्तव्य विमूढ़ हुवे और न ही विचलित हुवे। उन्होंने झपट कर थैली अपने सहयोगी के हाथ से ले ली। वहीं पर उन्होंने इतिहास को एक बार फिर दुहरा दिया। लगभग ऐसी ही विषम स्थिति में झाला सरदार ने महाराणा प्रताप का कवच एवं मुकुट धारण करके मौत को आमंत्रण दिया था। मुगल फौज का सारा ध्यान राणा प्रताप से हटकर झाला सरदार की ओर जा लगा था और प्रताप बहां

वे रक्त बहाने में सफल हो गए वहां भाना सरदार शहीद बन कर अमर हो गए थे। आधुनिक भाना सरदार बाबू इन्द्रचन्द ने झपट कर थैली क्या ली, गुण्डों का सारा आक्रोश उन पर उतर आया। वे अपने उद्देश्य को कम से कम समय में निपटाना चाहते थे — उन्हें प्रतिरोध पसन्द नहीं था क्योंकि उसमें गतिरोध होने की सम्भावना थी। लोगों ने देखा — एकाएक धुआं हो गया। धुएं के साथ ही व्यस्त जीवन का ध्यान इस घटना की ओर आकर्षित हुआ। यह कोई मिल अथवा कारखाने की भट्टी का धुआं नहीं था। गुण्डों ने कुकृत्य को आवरण देने के लिए बम-निक्षेप किया था ताकि उसकी आड़ में रकम लेकर चम्पत हो सकें। धुएं की ओट में दो कार्य साथ-साथ हुये। बाबू इन्द्रचन्द ने इतिहास को कर्तव्य-पालन की एक अमर कहानी उस धुएं की आड़ में दी। सामने की दूकान खुली थी। साहसी कर्मवीर ने छीना-झपटी की स्थिति में हिम्मत करके रकम की थैली दूकान में फेंक दी और परिचित दूकानदार ने विभीषिका को जल्दी से समझते हुए अपनी दूकान का शटर गिरा दिया। इस बीच साहसी शूरवीर, कर्तव्य-परायण बाबू इन्द्रचन्द के छुरे के घाव लग चुके थे तथा आक्रोश में पागल दानवीय गुण्डे अपनी असफलता का सारा दोष उनपर डालते हुए उनकी भौतिक लीला समाप्त करने के उद्देश्य से हमला कर रहे थे। अपनी असफलता से वे तिलमिला उठे थे। उसी उत्तेजना में एक घातक वार हुआ जिसने इतिहास के पन्नों को एक बार फिर खून से रंग दिया। इस खून से रंगे पन्नों में जिसमें गांधी, कैनेडी, कैरों, लियाकत अली आदि का रक्त मिला हुआ है, एक आहुति बाबू इन्द्रचन्द की भी लग गई। खून में खून मिल गया। इतिहास में एक तरफ कालिख उभर आई तो दूसरी ओर रक्तिम पृष्ठ में मानवता निखर उठी। गुंडों के दल में मौत को सामने देख कर भी बाबू इन्द्रचन्द ने स्वेच्छा से रकम की थैली छीनी थी। वे जान-बूझ

कर चक्रव्यूह में घुसे थे। उनके सामने भागने का विकल्प था अथवा एकम समर्पित करने की स्थिति भी थी पर वे तो अभिमन्यु की तरह प्राणों का सौदा करने ही आए थे। चक्रव्यूह के दुष्ट महारथी – दुर्योधन, दुःशासन अथवा जयद्रथ की तरह ये गुन्डे-तत्व भी उन्हें मार डालना चाहते थे। होनी का चक्र भी इसी तरह चलने वाला था। वे जानते थे कि इस व्यूह से निकल पाना कठिन ही नहीं असंभव है पर फिर भी अभिमन्यु को इस बात की चिन्ता नहीं थी। बराबरी वाले से तो हर कोई भिड़ सकता है पर असामान्य स्थिति में अपने से कहीं अधिक अपरिमित बल से टक्कर लेने का नाम ही तो मर्दानगी है। मरुधरा का यह मर्द गुण्डों की कारस्तानियों के आगे नहीं झुका। क्षण भर पहले जिस स्थान पर जीवन लहरा रहा था वहीं पर मौत की काली छाया मंडराने लगी। बम-निक्षेप में धुंए का फायदा उठाकर गुण्डे भागने में सफल हो गए। इस घटना को लिखने में चाहे इतना समय लग गया हो—घटने में तो दो चार मिनट ही लगे थे। अब घटनास्थल पर दो घायल व्यक्ति पड़े थे – एक जख्मी तो दूसरा मृत्यु से संघर्ष करने में लगा था। खून···खून··खून। जिसने भी सुना दौड़ा आया, जो जहां खड़ा था, वहीं से इस दृश्य को देखने भाग आया ···भीड़ लग गई। सबकी जुबान पर एक ही बात··· सब जगह एक ही चर्चा···खून···खून···खून।

इस भीड़ में घुस कर आने वाले एक व्यक्ति थे श्री बनजी गांधी। ये वही बनजी गांधी थे जिनसे एक घंटे पूर्व ही बाबू इन्द्रचन्द मिल चुके थे। मारवाड़ रिलीफ सोसाइटी के इस उत्साही कार्यकर्ता ने मिन्टों में ही अपना कर्त्तव्य स्थिर कर लिया। सारी घटनाएं चलचित्र की तरह उनके सामने से निकल गई। उन्होंने फौरन अपना गमछा उतार कर बाबू इन्द्रचन्द के घावों पर लपेटा और टैक्सी रुकवा कर मिन्टों में ही दोनों घायलों को अस्पताल

पहुंचा दिया। इस बीच कलकत्ता के बड़े बाजार को यह घटना आम चर्चा का विषय बन चुकी थी। इधर उधर टेलीफोन खड़क चुके थे-मौखिक समाचार पहुच चुके थे। एक मुंह से दूसरे मुंह होती हुई बात आनन फानन मे सभी जगह फैल चुकी थी। आतंक और आशंका के वातावरण में व्यापारियों ने अपनी दुकाने बंद कर ली। सैकड़ों लोग अस्पताल की ओर चल दिए। सब के मन में यही कामना थी कि इस परमवीर के प्राण किसी तरह बचा लिए जावें।

अस्पताल में भी भय, उत्तेजना एवं आशंका का वातावरण था। बात ही बात में लगभग बीस डॉक्टर इकट्ठे हो गए। इसमे घनश्यामजी गांधी का प्रभाव भी काम कर रहा था। कलकत्ते के अस्पताल के आधुनिकतम उपकरण, मूल्यवान औषधियां, उत्तम से उत्तम डॉक्टरी जांच आदि सभी उपाय काम मे लाए गए। घायल बाबू इन्द्रचंद अचेतावस्था मे पड़े थे। ग्लूकोज, आक्सीजन एवं जरूरत पड़े तो खून देने तक की सारी बातें तय थी। सबका लक्ष्य यही था कि इन अमूल्य प्राणो की रक्षा हो जाय। अस्पताल में जीवन और मृत्यु का विकट संघर्ष चल रहा था- पूरे १२० मिनटों तक चला। इस बीच डॉक्टरों ने एक के बाद दूसरी करके कई दवाइयों का प्रयोग किया- इन्जेक्शन्स दिए अन्य साधन अपनाए। लोगों के चेहरों पर आशा निराशा के उतार चढाव चल रहे थे- डॉक्टर प्रयत्नशील थे- सबकी सहानुभूति महान मनस्वी तपपूत इन्द्रचंद की जीवन रक्षा के लिए थी- सभी भगवान से प्रार्थना कर रहे थे कि किसी तरह वह उनकी रक्षा करे।

Man proposes and god disposes- आखिर यही कहावत चरितार्थ हुई। लगभग सवादस बजे रात्री के समय उन्हें खून की एक कै हुई। उसके साथ ही मौत ने भी घातक हमला कर दिया। संघर्ष की ये घड़ियां काफी विकट थी। इस संघर्ष मे केवल बाबू

इन्द्रचंद अकेले नहीं जूझ रहे थे- उनके साथ किसी के सुहाग के चिन्ह और सिन्दूरी रेखा व चूड़ियाँ भी मौत से टक्कर ले रही थीं। मां की ममता, बहिन की राखी के धागे, पिता का प्रेम व भाइयों के आत्मीय भाव भी मौत के मुंह से अपने जिगर के टुकड़े को खींच लाने में लगे हुए थे। अंतिम क्षण इतने विकट, इतने उत्तेजनापूर्ण एवं इतने अधिक संघर्षमय थे कि सभी उपस्थित लोगों की आँखें छलछला आई। मौत ने एक झटका दिया- एक जीवनदीप बुझ गया। मृत्यु के भयंकर बहाव में मंगलसूत्र और चूड़ियाँ बह गईं; राखी डोरे भी उसकी लपेट में आ गए, माता की ममता एवं पिता का वात्सल्य सभी एक साथ स्वाहा हो गए। मौत ने जीवन को अपनी गोद में बिठा कर उसे अमर बना दिया। आत्मा परमात्मा से जा मिली और लोगों को "अरिहन्त नाम सत्य" का आभास होने लगा।

यह था बाबू इन्द्रचंद का महा प्रयाण- यह था उनका अनुपम बलिदान- यह थी उनकी अलौकिक कुर्बानी। कवि बच्चन ने गांधी के बारे में जो विचार प्रकट किए थे वे बाबू इन्द्रचंद के सम्बन्ध में भी शतशः सही बैठते हैं। बच्चन ने गांधी की मृत्यु पर अपने उद्गार इस प्रकार प्रकट किए थे:-

'ये गांधी मर कर पड़ा नहीं है धरती पर।
वह उसकी काया, काया होती है नश्वर॥
गांधी सत्ता है, जो जग में है अजर अमर
दी उसने केवल जीवन की चादर उतार
गांधी का मरना भी जीने से जोरदार॥"

बाबू इन्द्रचंद की मृत्यु सैकड़ों जिन्दगियों से बेहतर थी। जीवन को घसीटते रहने में सार कहां है। आदर्शहीन जीवन मानवता के लिए कलंक और अभिशाप है। जीवन वह है जो किसी आदर्श की रक्षा में काम आए- जीवन वह है जो आने वाली पीढ़ी को

सन्देश दे- जीवन वह है जो मृत्यु के मुंह में जाकर भी अमर बन जाए। ऐसा जीवन लाखों में किसी एक को मिलता है– ऐसी मृत्यु भी हर किसी को नसीब नहीं होती। यह मौत जिन्दगी से ज्यादा वाचाल, जिन्दगी से ज्यादा जोरदार होती है।

बाबू इन्द्रचंद की पार्थिव देह सामने पड़ी थी। अब उसके सिवा रह ही क्या गया था। अगर कुछ शेष थीं तो उनके जीवन की गरिमा, उनकी महिमा, उनकी स्मृतियाँ और उनकी जिंदादिली थी। मौत उनकी जिन्दगी को सजाने में काम आई थी। जीवन के हाशिये में उसने तारीख लगा कर–तवारीख को एक नया जीवन दे दिया था। वे कर्तव्य की कसौटी पर खरे उतरे थे। उन्होंने नमक की कीमत रक्त से चुकाई थी। पन्ना ने नमक के नाम पर बेटे का बलिदान किया था– बाबू इन्द्रचंद ने आत्म बलिदान करके उसी परम्परा में अपना नाम जोड़ लिया।

दूसरे दिन···यद्यपि सारे कलकत्ते में इस घटना की चर्चा थी पर राष्ट्रीय संग्राम समिति द्वारा आयोजित बंगाल बंद के कारण बाबू इन्द्रचंद की पार्थिव देह को अग्नि के समर्पण नहीं किया जा सका। संयुक्त मोर्चे द्वारा समर्थित यह बंद काशीपुर डायमण्ड के विरुद्ध केन्द्रीय सरकार से विरोध प्रदर्शन करने के लक्ष्य से आयोजित किया गया था। १० अप्रैल १९६९ का दिन कलकत्ता में सारे कारोबार के स्थगन का दिवस था। मिलें, फैक्टरियाँ, दुकानें एवं सरकारी कार्यालय सभी बन्द थे ·····कलकत्ता से बाहर रेलगाड़ियाँ नहीं जा सकी थीं– यहाँ तक कि हवाई यातायात भी ठप्प हो चुका था। बोर्ड आफ सैकेण्डरी एज्यूकेशन की १० तारीख की निश्चित परीक्षा स्थगित कर दी गई थी। सारी गतिविधियाँ पूर्णरूपेण विराम की स्थिति में थी। राइटर्स बिल्डिंग में राज्य सचिवालय में कोई मन्त्री उपस्थित नहीं थे। ऐसे वातावरण में यह स्पष्ट हो जाता है कि बाबू इन्द्रचंद के निधन पर शोक प्रदर्शन के लिए ११

अप्रेल का दिन क्यों चुना गया ? १० तारीख को अस्पताल की औपचारिकताएं पूर्ण की गई जिनमें पोस्ट मार्टम आदि सारी क्रियाएं सम्मिलित थीं ।

वैसे तो बंगाल बंद एक राजनीतिक उद्देश्य की पूर्ति के लिए ही आयोजित हुवा था पर बाबू इन्द्रचंद के निधन का संयोग कुछ ऐसा बैठा कि स्वत: ही सारी दूकानें फैक्टरियां, मिलें तथा सर-कारी व गैर सरकारी संस्थाएं बंद रहीं—लगता था मानो परोक्ष रूप से विधि का विधान सारे बंगाल को इस शोक में सम्मलित कर रहा था । दस तारीख को ही विधि की विडम्बना एक और रूप में प्रस्तुत होने वाली थी ।

मुर्शीदाबाद से कलकत्ते की ओर आने वाली गाड़ी में सफर कर रहे थे श्री सुन्दरलाल सोनावत जिनके हृदय में अपने भाई से मिलने व साथ साथ बीकानेर प्रस्थान करने का उत्साह भरा हुवा था । वे पूर्व निश्चित योजना से ही उक्त रेलगाड़ी से सफर कर रहे थे । उन्हें आशा थी कि उनका भाई स्टेशन पर अगवानी के लिए अवश्य आएगा तथा फिर वे कुछ दिन साथ साथ व्यतीत करने में सक्षम हो सकेंगे । इसी उमंग से ओतप्रोत भाई सुन्दरलाल ने यात्रा की थी । मालदा स्टेशन आया । उन्होंने अपने कम्पार्टमेंट से बाहर इधर उधर नजर दौड़ाई पर बाबू इन्द्रचंद हों तो सामने आए । पर यह क्या……'ये सारे के सारे परिचित चेहरे यहां क्यों दिखाई दे रहे हैं ?……ये सेठ और गुमास्ते……जयचंदलाल भंवरलाल फर्म के सारे कर्मचारी……यह सब क्या ?……इतने सारे परिचित लोग और इतनी अधिक उदासी ! इनके बीच सदैव मुस्कराता हुवा इन्द्रचंद का चेहरा क्यों नहीं दिखाई देता ?…… ये सब बोलते क्यों नहीं हैं ?'……ऐसे कितने ही विचार एकदम दिमाग को उद्वेलित करने लगे । अपने आत्मीय के लिए [illegible] विचार पहले आते हैं । "तो क्या भाई इन्द्रचंद के कुछ [illegible]

तो नहीं गया……कहीं वह बीमार तो नहीं पड़ गया या कुछ और……कुछ और क्या हो सकता है ? कहीं वह……नहीं, नहीं ऐसा कभी भी नहीं हो सकता।" भाई सुन्दरलाल ने सोचा होगा।

सेठ और गुमास्ते आगे बढ़े। सुन्दरलाल की आंखों में जिज्ञासा के भाव थे। उसे एक तरफ ले जाया गया…… कहने वाला पिघल गया था और उसके साथ ही एक भाई का हृदय भी चूर्ण-चूर्ण होकर बिखर गया। उसके मुंह से अनायास ही जोरों की चीख निकल पड़ी। स्टेशन का वह दारुण दृश्य· · एक भाई के लिए दूसरे भाई का विलाप……आंसुओं की वर्षा की झड़ी से सधि और फिर ढाढ़स व संतोष की बातें, तथा ज्ञान के उपदेश· ··सभी कुछ हुवे। खैर, इस सारे दुखान्त नाटक में एक बात अवश्य ठीक हुई और वह यह थी कि एक भाई को अग्नि के समर्पण करने के लिए दूसरा भाई उपस्थित हो गया था। परदेश में भी परिवार का प्रतिनिधित्व हो रहा था। एक टूटे हुए दिल का सांत्वना के शीशे में ज्यों-त्यों जड़कर घर लाया गया। १० अप्रैल की काली अंधियारी रात सुन्दरलाल के लिए महान विकट दुर्दम काल रात्री के समान थी। जवान भाई की लाश सामने पड़ी थी—उस भाई की लाश जो जिन्दगी में कभी भी नहीं हारा था, जिसने सदैव मुस्कानें बिखेरी थी–जिसने कर्तव्य को सर्वोच्च स्थान दिया था। वह भाई जिसने कर्मठता का परिचय दिया और कभी आराम की इच्छा तक नहीं की, आज निश्चल, निस्पंद पड़ा था। आज वह चिरशांति में अभूतपूर्व आराम कर रहा था। मुख पर वही सौम्यता विराजमान थी। सुन्दरलाल की एक भुजा (भाई) कटी पड़ी थी और विलाप के क्षण निकलने कठिन हो रहे थे। कविवर सियारामशरण गुप्त के शब्दों में वह काल रात्रि जरूरत से ज्यादा लम्बी लग रही थी। विलाप के क्षणों में मन के भाव कुछ इस

अप्रेल का दिन क्यों चुना गया ? १० तारीख को अस्पताल की औपचारिकताएं पूर्ण की गई जिनमें पोस्ट मार्टम आदि सारी क्रियाएं सम्मिलित थीं।

वैसे तो बंगाल बंद एक राजनीतिक उद्देश्य की पूर्ति के लिए ही आयोजित हुवा था पर बाबू इन्द्रचंद के निधन का संयोग कुछ ऐसा बैठा कि स्वतः ही सारी दूकानें फैक्टरियां, मिलें तथा सरकारी व गैर सरकारी संस्थाएं बंद रहीं—लगता था मानो परोक्ष रूप से विधि का विधान सारे बंगाल को इस शोक में सम्मलित कर रहा था। दस तारीख को ही विधि की विडम्बना एक और रूप में प्रस्तुत होने वाली थी।

मुर्शिदाबाद से कलकत्ते की ओर आने वाली गाड़ी में सफर कर रहे थे श्री सुन्दरलाल सोनावत जिनके हृदय में अपने भाई से मिलने व साथ साथ बीकानेर प्रस्थान करने का उत्साह भरा हुवा था। वे पूर्व निश्चित योजना से ही उक्त रेलगाड़ी से सफर कर रहे थे। उन्हें आशा थी कि उनका भाई स्टेशन पर अगवानी के लिए अवश्य आएगा तथा फिर वे कुछ दिन साथ साथ व्यतीत करने में सक्षम हो सकेंगे। इसी उमंग से ओतप्रोत भाई सुन्दरलाल ने यात्रा की थी। सालदा स्टेशन आया। उन्होंने अपने कम्पार्टमेंट से बाहर इधर उधर नजर दौड़ाई पर बाबू इन्द्रचंद ही तो सामने आए। पर यह क्या……ये सारे के सारे परिचित चेहरे यहां क्यों दिखाई दे रहे हैं ?……ये सेठ और गुमास्ते……जयचंदलाल कंवरलाल फर्म के सारे कर्मचारी……यह सब क्या ?……इतने सारे परिचित लोग और इतनी अधिक उदासी ! उनके बीच सदैव मुस्कराता हुवा इन्द्रचंद का चेहरा क्यों नहीं दिखाई देता ?…… ये सब बोलते क्यों नहीं हैं ?"……ऐसे कितने ही विचार एक सा[illegible] उनके दिमाग को उद्वेलित करने लगे। अपने आत्मीय के लि[illegible] [illegible] विचार पहले आते हैं। "तो क्या भाई इन्द्रचंद के कुछ [illegible]

तो नहीं गया……कहीं वह बीमार तो नहीं पड़ गया या कुछ और……कुछ और क्या हो सकता है ? कहीं वह……नहीं, नहीं ऐसा कभी भी नहीं हो सकता।" भाई सुन्दरलाल ने सोचा होगा।

सेठ और गुमाश्ते आगे बढ़े। सुन्दरलाल की आंखों में जिज्ञासा के भाव थे। उसे एक तरफ ले जाया गया ……कहने वाला पिघल गया था और उसके साथ ही एक भाई का हृदय भी चूर्ण-चूर्ण होकर बिखर गया। उसके मुह से अनायास ही जोरों की चीख निकल पड़ी। स्टेशन का वह दारुण दृश्य ……एक भाई के लिए दूसरे भाई का विलाप……आंखों की वर्षा की झड़ी से सांध और फिर ढाढस व संतोष की बातें, तथा ज्ञान के उपदेश……सभी कुछ हुवे। खैर, इस सारे वृत्तान्त नाटक मे एक बात अवश्य ठीक हुई और वह यह थी कि एक भाई को अग्नि के समर्पण करने के लिए दूसरा भाई उपस्थित हो गया था। परदेश में भी परिवार का प्रतिनिधित्व हो रहा था। एक टूटे हुए दिल का सांत्वना के शीशे मे ज्यों-त्यों जड़कर घर लाया गया। १० अप्रेल की काली अंधियारी रात सुन्दरलाल के लिए महान विकट दुर्दम काल रात्री के समान थी। जवान भाई की लाश सामने पड़ी थी—उस भाई की लाश जो जिन्दगी मे कभी भी नही हारा था, जिसने सदैव मुस्कानें बिखेरी थी - जिसने कर्तव्य को सर्वोच्च स्थान दिया था। वह भाई जिसने कर्मठता का परिचय दिया और कभी आराम की इच्छा तक नहीं की, आज निश्चल, निस्पद पड़ा था। आज वह विश्रांति में अभूतपूर्व आराम कर रहा था। मुख पर वही सौम्यता विराजमान थी। सुन्दरलाल की एक भुजा (भाई) कटी पड़ी थी और विलाप के क्षण निकलने कठिन हो रहे थे। कविवर सियारामशरण गुप्त के शब्दों मे वह काल रात्रि जरूरत से ज्यादा लम्बी लग रही थी। विलाप के क्षणों मे मन के भाव कुछ इस

प्रकार थे —

'अरी रात क्या अशुभता का पट्टा लेकर आई तूं ?
आकर के इस निखिल विश्व पर प्रलय घटा सी छाई तूं।"
पल भर भी न बढ़ी आगे तूं सहसा ठिठक गई ऐसे,
क्या न अरुण-आभा जागेगी, सहसा आज विकृति कैसे ?"

इस बीच मारवाड़-रिलीफ-सोसाइटी तथा काशी-विश्वनाथ-सेवा समिति के कार्यकर्त्ता अपने दायित्वों का पालन करने में लगे थे। उन्होंने निश्चय कर लिया था कि वीरगति पाए हुए इस सपूत की उसके सम्मान के अनुकूल ही अन्त्येष्टी क्रिया करनी है। रातों-रात शोक प्रदर्शन के लिए काले कपड़े की पट्टियां तैयार करवाई गई। ऊंचे-ऊंचे व्यापारी, धन्ना सेठ एवं साहूकार सभी स्वयं-सेवकों की तरह इस योजना को मूर्तरूप देने में लग गए। शोक जुलूस का मार्ग निर्धारित किया गया। सम्बन्धित मंत्री को ज्ञापन देने का निर्णय लिया गया। बड़े बाजार का यह महान बलिदान सभी के लिए 'अपनापन" लिए हुवे था।

दूसरे दिन प्रातःकाल का दृश्य अत्यन्त ही हृदय-विदारक था। शहीद का पार्थिव शरीर ले जाया जा रहा था। "गुल रहो अहले वतन" कहने वाला सफर कर रहा था। "वतन का नौजवां" शहीद हो गया था। 'अहिंसा के सीने को एक बार फिर 'हिंसा" ने चीर दिया था। उसके पीछे पीछे एक जुलूस चल रहा था। एक सार्वभौमिक, सार्वजनिक जुलूस जिसमें मालिक, मजदूर, सेठ, गुमाश्ते; धनवान–गरीब, किसान-मजदूर, शिक्षित-अशिक्षित, नर-नारी, बुड्ढे–बच्चे सभी वर्गों के सभी वयों के लोग सम्मिलित थे। मानवता का एक दरिया साथ में चल रहा था। जहां तक नजर पहुंचती थी, नरमुंड ही नरमुंड दिखाई दे रहे थे। नारियां अपने अपने भवनों की खिड़कियों से निकलते हुए जलूस के शहीद-नेता को श्रद्धांजलियां दे रही थीं। छलछलाई आंखों से

वे अपनी मौन शोकाजलियां अर्पित कर रही थीं। भवनों के गुम्बदों, पेड़ों की डालियों; ऊंचे स्थानों एव खड़ी हुई बसों की छतों पर से लोगो ने इस शोक जुलूस को निकलते हुवे देखा। "शहीद बाबू इन्द्रचंद की जय हो...शहीद बाबू इन्द्रचद जिन्दाबाद ..बाबू इन्द्रचंद अमर रहे" के गगनभेदी नारे हजारों कंठों से निकल रहे थे। पार्थिव शरीर पर फूलों के हार रखे हुए थे। सभी ओर से फूल चढ़ाए जा रहे थे। सारा शरीर फूलों से ढक गया था...और फूल...और अधिक फूल...ऊपर से, दाए से, बाए से, सामने से, फूल...फूल...फूल। लगता था फूलो की वर्षा हो रही हो। आगे आगे दो हजार से भी ज्यादा लोग अपने बाहुओं पर काली पट्टिया बांधे चल रहे थे। ये पट्टिया बड़े बाजार क्षेत्र मे फैले हुए आतक के वातावरण के सम्बन्ध म विरोध प्रदर्शन का प्रतीक थीं। इन दो हजार सभ्रान्त नागरिकों मे बड़े बाजार क्षेत्र के दो विधायक सर्व श्री नेपालराय और रामकृष्ण सरावगी सम्मिलित थे। इसके अतिरिक्त सर्व श्री सांवलराम गोयनका, रामगोपाल बागला, केशरदेव जाजोदिया; देवकीनन्दन मानसिहका, जोशी निर्भीक, दुर्गाप्रसाद नाथानी, रामनाथ शर्मा, गीतेश शर्मा, सागरमल शर्मा आदि कई कुलीन व्यक्ति इस अग्रिम पक्ति में शरीक थे। इन दो हजार व्यक्तियो के पीछे शोक संतप्त अथाह जनसमूह लहरा रहा था। काली पट्टियो से मौन शोक प्रदर्शन करने वाले इन व्यक्तियों ने रायटर्स बिल्डिंग के आगे भी अपने विरोध को मूर्तरूप दिया। शहीद बाबू इन्द्रचंद के पार्थिव शरीर की शवयात्रा का दृश्य उस समय हृदय विदारक सा हो गया। उक्त सभ्रात व्यक्तियों का एक शिष्टमंडल खाद्यमंत्री श्री सुधीनकुमार से मिला तथा व्याप्त गुंडागर्दी के विरुद्ध जनमानस की भावना का परिचय देते हुए आतंक एवं असुरक्षा के वातावरण में उचित सरक्षण की माग की। प्रतिनिधि मंडल के नेता सेठ सावलराम गोयनका ने मंत्री

महोदय का ध्यान ९ अप्रेल के इस अमानवीय कुकृत्य की ओर खींचते हुए समुचित जांच की उपयोगिता पर जोर दिया। मंत्री महोदय ने प्रतिनिधि-मंडल को आश्वासन दिया कि हर स्थिति में कानून का दृढ़तापूर्वक परिपालन किया जाएगा। उन्होंने सभी लोगों से समाजविरोधी तत्वों का दमन करने में सहयोग देने की अपील की।

जैसे कि लिखा जा चुका है कि इस शोक प्रदर्शन में असंख्य लोग सम्मिलित थे- चारों तरफ अनगिनित नरमुंड ही नरमुंड दिखाई दे रहे थे। आगे के २००० काली पट्टी बांधे व्यक्तियों के अतिरिक्त शोक संतप्त भीड़ में सम्मिलित लोगों की संख्या का अनुमान लगाना सर्वथा कठिन था। कई हजार लोग उस शोक जुलूस में सम्मिलित थे। हजारों हजारों कण्ठों से जयनाद सुनाई दे रहा था। लोगों के दर्शनार्थ शव एक ऊँचे स्थान पर रखा गया था ताकि हजारों उत्सुक आँखें उसे अपना सम्मान समर्पित कर सकें। नरमुण्डों से पटी हुई सड़कें कलकत्ते में एक अजीब ही दृश्य की साक्षी बन रही थीं। बीसवीं शताब्दी में किसी सामान्य गुमाश्ते के लिए यह सबसे बड़ी शव यात्रा थी। इसी कलकत्ते में सेठ-साहूकार, ऊँचे पदाधिकारी, अच्छे से अच्छा मिल मालिक, विद्वान, मनीषी दिवंगत हुवे हैं पर इतना बड़ा जनसमूह कभी भी देखने में नहीं आया। इस शव यात्रा में लोग स्वेच्छा से सम्मिलित हुए थे-बिना प्रचार-प्रसार के हजारों ही अबाल वृद्ध लोग अपने निजी कार्यों को छोड़ कर उसमें भाग लेने आये थे।

एक कमी अवश्य दिखाई देती थी। न तो इस शव यात्रा की कोई फिल्म ली गई और न आकाशवाणी ने आंखों देखा हाल प्रसारित किया गया क्योंकि यह किसी मन्त्री अथवा राज्यपाल की शव यात्रा थोड़े ही थी। यह तो उन घटनाओं की कड़ी थी [illegible] घटनाएं कलकत्ते में होना अब आम बात हो गई है। [illegible]

८ महिनों में पश्चिम बंगाल में कलकत्ते को छोड़कर ४८६ हत्या-काण्ड हो चुके हैं। पर किसी भी हत्याकाण्ड का इतना अधिक सार्वजनिक प्रभाव नहीं हुआ जितना इस दुःखद निधन का हुआ था। शवयात्रा की जनसंख्या के बारे में भिन्न-भिन्न विचार है पर एक बात पर सब सहमत हैं कि यह शोक जुलूस अभूतपूर्व रूप से विशाल था। शोकप्रदर्शन करता हुआ यह जुलूस कलकत्ते के भीड़ भाड़ भरे स्थानों से निकला। जुलूस के मार्ग में बड़ा बाजार स्ट्रीट चित्तरंजन एवेन्यू, मछुआ बाजार स्ट्रीट, चितपुर रोड, स्टेण्ड रोड आदि स्थान पड़ते थे। प्रत्येक स्थान पर इन शोक सतप्त प्राणियों के समूह के पहुंचने से पूर्व ही हजारों दर्शनार्थी एकत्रित हो जाते थे। लगता था कि किसी दिवंगत महान नेता के अन्तिम दर्शन के लिए हजारों-हजारों लोग स्थान-स्थान पर खड़े हों। मकानों के छज्जों, पेड़ों की डालियों, बसों की छतों ऊँची अटारियों, भवनों की ऊपरी मञ्जिलों तथा ऊँचे ऊँचे स्थानों से लोग पुष्प बरसा रहे थे। एक ३० वर्षीय दिवंगत युवक के शव पर वयोवृद्ध लोग फूल अर्पित कर रहे थे। सत्तर अस्सी वर्ष के वृद्ध दूर से हाथ जोड़ कर अन्तिम दर्शन की प्रतीक्षा में घण्टों खड़े रहे थे। ऐसा था कलकत्ते नगर का ११ अप्रेल के प्रातःकाल एक मध्यान्ह का दृश्य। जहाँ तक नजर जाती थी बन्द दूकानों की कतारें ही दर्शकों का स्वागत कर रही थीं। ये दुकानें बाबू इन्द्रचन्द के निधन के बाद दो दिनों तक अर्थात् १० व ११ अप्रेल को बन्द रहीं। एक दिन बंगाल बंद के कारण और दूसरे दिन शोक-दिवस के कारण सारा कारोबार ठप्प रहा। इसको हम यों भी लिख सकते हैं कि करोड़ों का लेन-देन दो दिनों तक नहीं हुआ। एक साहसी युवक सारे कलकत्ते नगर पर अपने बलिदान की अमिट छाप छोड़ने में सफल हुआ था। पहले दिन तो लोग दुकानें बन्द करने को बाध्य थे पर दूसरे दिन स्वेच्छा से ऐसा किया गया था– बिना जोर जबरदस्ती के करोड़ों का

कारोबार बन्द रहा था।

इस शव यात्रा में हजारों शोक संतप्त प्राणियों में बाबू इन्द्रचंद के भाई श्री सुन्दरलाल भी सम्मिलित थे जो एक दिन पूर्व ही खगड़ा से कलकत्ता पहुंचे थे। शहीद इन्द्रचंद के सारे साथी जिनमें सेठ जयचंदलाल भंवरलाल फर्म के कर्मचारीगण भी सम्मिलित हैं, शोकयात्रा में साथ दे रहे थे। उन सहधर्मियों में पं० पाबूदानजी, जुगलजी सावणसुखा जुगराजजी बछावत, देवराजजी बछावत, वीरकुमार बछावत, मगनमल बछावत, वृद्धिचंद बछावत, अबीरचंद कोचर, केवलचंदजी बछावत, व्यापारी हर्ष एवं मखू रसोइया आदि लोग थे। विगत १७ वर्षों के कीमती साथी को खोकर ये लोग मधुर स्मृतियों व संस्मरणों के आवरण में शोकाकुल होकर उस शोक यात्रा में आगे बढ़ रहे थे। फर्म के मालिक भी हजारों अन्य लोगों के साथ अपने महान नमक हलाल, स्वामीभक्त, कर्तव्य-परायण गुमास्ते को विदा देने अन्त्येष्ठी घाट जा रहे थे। यह दृश्य वस्तुतः हृदय विदारक था। इतिहास को ऐसे कई दृश्यों का साक्षी होना पड़ता है। एक अमानवीय कृत्य से मानवता की इस हत्या पर इतिहास मौन श्रद्धांजलि समर्पित कर रहा था। संसार भर में मानवता के मूल्यों की रक्षा के लिए जहाँ प्रयास होते हैं वहां अमानवीय तत्व उन्हें नष्ट करने में उतने ही तत्पर रहते हैं। इन समाज विरोधी लोगों को अस्थाई लाभ की चिन्ता रहती है। इस लाभ के लिए वे मानवता के खजाने के मोतियों से सारे समाज को वञ्चित कर देते हैं। आवेश अथवा विक्षिप्त विचारों में वे अमूल्य निधियों को नष्ट करते नहीं हिचकिचाते। कुछ ऐसा ही उपक्रम शहीद बाबू इन्द्रचंद के मामले में हुवा था।

असंख्य शोकाकुल व्यक्तियों का यह अभूतपूर्व जुलूस [illegible] [illegible] तक कलकत्ते की सड़कों पर चलता रहा। इस [illegible] [illegible] के सम्मुख प्रदर्शन; शिष्ट मण्डल से वार्ता; [illegible]

महोदय का भाषण व अन्य सारे कार्यक्रम भी शामिल थे। ५½ घटों तक बड़े बड़े धनपति, मिल मालिक, विधायक, नेता, विद्वान, ट्रेड यूनियन्स के कर्मचारी आदि सभी जुलूस में चलते रहे। कलकत्ते की सड़कों के लिए ऐसी शवयात्रा अपने आप में अद्वितीय घटना थी।

लम्बे यात्रा काल की समाप्ति पर शोक-जुलूस नीमतल्ला घाट पर पहुंचा जहाँ अन्त्येष्ठी क्रिया का समापन होना था। यही पर भाई सुन्दरलाल ने अपने ही हाथो अपने प्रिय भ्राता को अग्नि के समर्पण किया। चिता ने बाबू इन्द्रचद की पार्थिव लीला समाप्त कर दी। ज्वालाए उसके भौतिक अवशेषो को निगल गई पर इन्ही लपेटों ने उसके चरित्र में एक ऐसी चमक जोड़ दी जो आने वाले युगों तक अपनी दिव्यता बनाए रखेगी। इसी ज्वालापुंज में अपनी इहलीला समाप्त करके शहीद बाबू इन्द्रचद आने वाली पीढ़ियों एव समवयस्कों के लिए प्रेरणा पुंज बन गया। धू धू करके जलती चिता दिगदिगन्त में उसकी महानता का साक्षी बनते हुए तृप्त हो गई।

बाबू इन्द्रचंद के असामयिक एव आकस्मिक निधन के समाचार यथासंभव शीघ्र ही बीकानेर भेज दिये गए। इस हृदय विदारक घटना की तार द्वारा सूचना प्रेषित की गई। तार दिनाक १० अप्रेल १९६९ को मध्याह्न २ बजे के लगभग बीकानेर पहुंचा पर सीधे श्री जोगीलाल जी सोनावत के घर नही पहुच कर श्री जोगीलाल जी आचार्य के घर गलती से पहुंच गया। आचार्य जी मेरे (इस पुस्तक के लेखक के) पड़ौसी हैं अत. उनके पुत्र इस तार का आशय समझने मेरे पास आए। तार की सूचना इस प्रकार थी— INDRACHAND EXPIRED–MASTAPAL कलकत्ते से तार भेजा गया था तथा इन्द्रचन्द एव जोगीलाल जी का सन्दर्भ स्थापित करके मुझे समझते देर नही लगी कि यह वज्रपात सोनावत परिवार में हुवा है। अभी १०–१५ मिन्ट पहले ही मैं सोनावत जी के

घर के पास से निकला था। बाई पुष्पा के शुभ विवाह के अवसर पर मंगलगीत गाए जा रहे थे। मैं जानता था कि इस रंग में भंग होने वाला है। मंगल गीतों के हर्ष एवं उल्लास में विलाप एवं वेदना का प्रहार होने को है पर विवशता थी। मैंने अत्यन्त भारी हृदय से वह तार सोनावत परिवार में भिजवा दिया। चंद मिन्टों पहले जहां आनन्द की लहरें उठ रही थीं वहां शोक का पहाड़ टूट पड़ा। तार के समाचार बिजली की तरह अथवा जंगल की आग की तरह मिन्टों में सम्बन्धियों, प्रियजनों, मित्रों, समवयस्कों तक पहुंच गए और उन लोगों का तांता लगने लगा। मां के आंसू रोके नहीं रुक रहे थे। बहिनें विलाप कर रही थीं – भाई फूट पड़े थे, बच्चे चीत्कार करने लगे थे – बुड्ढे माथे ठोक रहे थे पर इन सबके मध्य अजातशत्रु जोगीलाल जी होनी का चक्र हंसे गले पर दृढ़ हृदय से सहन कर रहे थे। बुढ़ापे की उज्ज्वल चद्दर में दूसरा दाग लग गया था— जामाता के अवसान के बाद प्रिय पुत्र के वियोग का दाह हृदय में धधक रहा था पर फिर भी 'वज्रादपि गरीयसी' श्री जोगीलाल जी का हृदय इस भीषण प्रहार का साक्षी बनकर भी अविचलित रहा। माता श्री रतन देवी पहले तो विचलित हुई पर अंततः वह भी संभल गईं।

ईश्वर की लीला अपरम्पार है। एक तरफ वह विवाह की माया बिखेरता है तो दूसरी ओर मृत्यु की विभीषिका खड़ी कर देता है। इस महान अनहोनी दुर्घटना पर सहज में विश्वास भी तो नहीं किया जा सकता था। फलतः टेलीफोन एक्सचेंज पर हितैषी एवं परिजन पहुंच गए तथा कलकत्ता से फोन मिला कर वार्ता का प्रयास करने लगे। 'बूटी की बूटी नहीं है। 'जो होना था वह हो ही गया था"— अब मिथ्या आशा करना व्यर्थ था पर सम्बन्धियों के हृदय इस तथ्य को इतना शीघ्र स्वीकार भी कैसे कर सकते थे? आखिर यह अपच, कठोर एवं वज्रपात सरीखे

वाला सत्य सामने आ गया। इस बात की पुष्टि हो गई कि बाबू इन्द्रचन्द इस असार संसार के बंधन से मुक्त हो चुके थे तथा सारे कलकत्ते पर अपने बलिदान की छाप छोड़ने में भी सफल हुवे थे। बीकानेर में टूटे-बिखरे हृदयों की अपार वेदना की थाह पानी कठिन है पर यह तो पारिवारिक परिवेश था। हम इस महान चरित्र नायक के निधन का सार्वजनिक प्रभाव भी कलकत्ते की शोकाकुल जनता के विलाप एवं शव-यात्रा के दृश्यों में देख चुके हैं। कलकत्ते का जनमानस महान निधि को खोकर आकुल हो चुका था। बीकानेर के इन संतप्त परिजनों एवं मित्रों को कुछ देर के लिए यहीं छोड कर हम पुन. कलकत्ते के शोकमय वातावरण की ओर अपने पाठकों का ध्यान आकर्षित करना चाहते है।

कलकत्ते के निवासियों ने इस "पीड़ा" को एक दर्शक की तटस्थता से नहीं अपितु एक परिजन की आत्मीयता से भोगा था तभी तो बड़ा बाजार एवं चहल-पहल के अन्य केन्द्र बन्द रहे थे। तभी तो ५॥ घण्टों तक शवयात्रा का अलौकिक कार्यक्रम सम्पन्न हुआ था। इस महान घटना का और अधिक बाचाल, और अधिक स्पष्ट स्वरूप शाम को सत्यनारायण पार्क में होने वाली शोकसभा में प्रकट हुवा।

वह शोक सभा अपार जन समुदाय का दिवंगत युवक के प्रति जहां प्रेम प्रदर्शित करती थी वहां कलकत्ते के जनमानस के शोक की भी परिचायक थी। हजारों-हजारों आदमी इस सभा में उपस्थित थे। वक्तागण भाव विभोर होकर इस महान कर्त्तव्यपरायण, साहसी, धीर, वीर युवक के बलिदान की चर्चा कर रहे थे। श्रोता शांत भाव से उसकी वीर-गाथा सुन रहे थे। सत्यनारायण-पार्क श्रोताओं से पूरी तरह भरा था। सारी व्यवस्था विश्वनाथ-सेवा-समिति एवं मारवाड़-रिलीफ सोसाइटी के उत्साही कार्यकर्ताओं

ने की थी। सभा पूर्ण शांति के साथ सम्पन्न हुई। इसमें बाबू इन्द्रचन्द के असामयिक निधन पर शोक प्रस्ताव पारित करते हुए पश्चिमी बंगाल सरकार से मांग की गई कि बड़े बाजार क्षेत्र में फैली आंतक की स्थिति को समाप्त किया जावे तथा जन-धन की सुरक्षा की व्यवस्था की जावे। शोक सभा में बोलने वाले प्रभावशाली वक्ताओं में सर्व श्री सेठ सांवलराम गोयनका, रामगोपाल बागला, जोशी निर्भीक तथा कांग्रेसी विधायक नैपाल रॉय एवं रामकृष्ण सरावगी सम्मिलित थे। कलकत्ते के इतिहास में भिन्न-भिन्न पेशों एवं अभिरुचियों के व्यक्तियों का यह एक अभूतपूर्व शोक-सम्मेलन था। अपने अद्वितीय बलिदान से बाबू इन्द्रचन्द सभी लोगों का प्रेरणा का श्रोत बन गये थे।

अमर शहीद इन्द्रचंद के निधन पर वैसे तो सभी लोग शोक संतप्त थे पर यह हृदय–विदारक समाचार उनके मित्रों एवं संबंधियों के लिए अत्यन्त वेदनापूर्ण एवं असहनीय था। उनके बचपन के साथी सर्व श्री शिवचंद आचार्य, बुलाकीचद अभानी, किशनलाल व्यास, बुलाकीदास कावड़िया. भंवरलाल सुराना, बुलाकीचंद सुराणा, लालचंद 'भावुक' आदि ने जब समाचार सुना तो वे अवाक् रह गए। उनमें से तो कुछ इस असंभाव्य घटना को मानने को भी तैयार नहीं थे। वे बाबू इन्द्रचंद के बीकानेर आगमन की प्रतीक्षा कर रहे थे। उन्हें यह स्वप्न में भी आशा नहीं थी कि उनका प्रिय साथी उन्हें इस प्रकार रोता बिलखता छोड़ कर चला जायगा। पर होनी का चक्र ही ऐसा था कि उसके आगे किसी सांसारिक प्राणी की कुछ भी नहीं चल सकी और उड़ने वाला पंछी उड़ गया। काल-कर्म की यही विभीषिका है कि आज तक कोई भी प्राणी इसे समझ नहीं पाया है। इस पर ईश्वर का एकाधिकार है। राज्य और धन से नियति का एक क्षण भी नहीं खरीदा जा सकता।

राजा राणा छत्रपति हाथिन के असवार ।
मरना सब को एक दिन अपनी-अपनी बार ॥

ईश्वर की महिमामयी श्रृष्टि में जन्म-मरण का चक्कर चलता रहता है । शताब्दियों पहले भी करोड़ों लोग इस भूमंडल में थे; आज भी है और आगे भी रहेंगे । ये उत्थान-पतन; जय-पराजय, जीवन-मरण आदि नियति की निश्चित बातें हैं जो सांसारिक प्राणियों के वश में नहीं है ।

जन्म-मरण सब दुख सुख भोगा
हानि-लाभ प्रिय मिलन-वियोगा ।
कालकर्म वश होइ गुसाई
बरबस रात दिवस की नाई ॥

रात और दिन की तरह प्रत्यावर्तित होने वाली घटनाएं ही अपने तानों-बानों से सृष्टि का वस्त्र-विन्यास करती है । शहीद बाबू इन्द्रचन्द के बचपन के साथी इस वज्राघात से अत्यन्त ही दुःखी हुवे । उनके व्यवसाय में सहयोगी मित्र भी इस निधन से अत्यन्त ही शोक-सतप्त हो गए । १७ वर्षों तक कलकत्ते में बाबू इन्द्रचन्द ने जो साधना की थी; उनके व्यावसायिक क्षेत्र के साथी उसके भागीदार थे । उनमें कुछ साथी बीच में बिछुड भी गए पर उनका प्रेम सदा अक्षुण्ण रहा । इन शोकग्रस्त साथियों में प० पाबूदान जी, श्री शंकर लाल चोरड़िया जुगलजी साणसुखा, जुगराज जी बछावत, शिवराज जी बछावत, देवराज जी बछावत, नथमल जी बछावत, वीर कुमार जी बछावत, मगनमल जी बछावत, वृद्धिचन्द जी बछावत, धनराज जी बछावत, अबीरचंद जी कोचर, राजकुमार जी कोचर, जमनादास जी सेवग, तुलसीराम जी स्वामी, केवलचंद जी बछावत व्यापारी हर्ष एवं मघू रसोइया आदि सम्मिलित हैं। ये लोग बाबू इन्द्रचन्द के सहयोगी, कर्मचारी एवं अभिन्न मित्र थे तथा इस विलाप एव वेदना के समय उनका शोकाकुल होना स्वाभाविक ही है ।

बाबू इन्द्रचन्द के मरणोपरान्त जिन सज्जनों ने इन समस्त आयोजनों एवं उसके बाद के कार्यों में प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से योगदान किया वे वस्तुत: धन्यवाद के पात्र हैं। इन लोगों में काशी विश्वनाथ-सेवा-समिति एवं मारवाड़ रिलीफ सोसाइटी के कार्यकर्ताओं के अतिरिक्त वैयक्तिक रूप से भी कई सम्भ्रान्त व्यक्तियों की गणना की जा सकती है। सर्व श्री सांवलराम जी गोयनका, रामकिशन जी सरावगी, मंगल चन्द जी कोचर, मोहन लाल जी वेगाणी, माणक चन्द जी वेगाणी, बछराज जी अभाणी, मिलापचन्द जी दफ्तरी, तिलोकचन्द जी दफ्तरी, लक्ष्मण दास जी दफ्तरी एवं कांग्रेस तथा अन्य दलों के विधायकों व नेताओं ने भी इस महान बलिदान के उपयुक्त शोक-संयोजन एवं सहायता के कार्यों में अनुपम योग दिया। वे सब धन्यवाद के सुपात्र हैं।

इस समस्त समायोजन में परम समाज सेवी सेठ सांवलराम गोयनका की भूमिका प्रमुख रही है। यह उन्हीं के सद्प्रयासों का फल था कि इस अवसर के अनुकूल ही शोक प्रदर्शन किया जा सका। पश्चिमी बंगाल के खाद्य मन्त्री श्री सुधीनदत्त से मिलने वाले प्रतिनिधि मंडल के नेता भी सेठ गोयनका ही थे। सेवाभावी सेठ सांवलराम जी गोयनका समाज-सेवा, दलितोद्धार एवं कष्ट निवारण के क्षेत्रों में सदैव सक्रिय रहे हैं। वे काशी विश्वनाथ सेवा समिति के संचालक एवं कलकत्ते के अत्यन्त प्रभावशाली सामाजिक कार्यकर्ता हैं। बाढ़, अकाल, दंगों अथवा अन्य प्राकृतिक एवं मानवकृत विपत्तियों के समय वे धर्म, वर्ण अथवा लिंग के भेदभाव से रहित समाज सेवा करने में अग्रणी रहते हैं। उनके मन में अपार मानव-प्रेम एवं सहृदयता की भावनाएं हैं।

वे प्रथम व्यक्ति थे जिन्होंने बाबू इन्द्रचन्द के इस महान बलिदान की गरिमा को समझने का प्रयास किया। उन्होंने शहीद के परिवार को आर्थिक सम्बल देने का प्रस्ताव किया। शहीद बाबू

इन्द्रचंद के भाई सुन्दरलाल से सेठ गोयनका ने २००००) रुपये आर्थिक सहायता स्वरूप लेने का आग्रह किया। सोनावत परिवार का धार्मिक एवं सामाजिक परिवेश त्याग, अपरिग्रह एवं संयम का रहा है। भाई सुन्दरलाल इसी परिवेश में बड़े हुवे थे। उन्होने सेठ गोयनका के इस प्रस्ताव को अत्यन्त आदरपूर्वक अस्वीकृत कर दिया। वे अपने शहीद भाई की मृत्यु पर ऐसी आर्थिक सहायता लेने के पक्ष में नही थे। सेठ सांवलरामजी गोयनका ने इस पर भाई सुन्दरलाल से आग्रह किया कि १००००) दस हजार रुपयों का ड्राफ्ट तो उन्हें लेना ही होगा पर मनस्वी युवक ने इसमें भी विनम्रतापूर्वक अपनी विवशता प्रकट कर दी। सेठ गोयनका संभवत. ऐसे ही मनस्वी सपूतों से प्रभावित होने वाले है अतः उनके मुंह से अनायास ही ये शब्द निकल पड़े "शाबास बेटे……" और उन्होंने बाबू सुन्दरलाल की भूरि-भूरि प्रशंसा की।

शोक सभा में भी सेवाभावी सेठ गोयनका ने शहीद के परिवार के प्रति लोगों के सामाजिक दायित्व का वर्णन किया। उन्होंने ऐसा वातावरण बना दिया कि योग्य-पात्र को अवश्य ही सम्मान तथा उसके परिवार को सम्बल मिलना चाहिए।

सेठ जयचंदलाल भंवरलाल फर्म ने बाबू इन्द्रचद के परिवार की सहायतार्थ जो राशि अर्पित की उसे परिवार वालो ने अवश्य स्वीकार करली क्योंकि इस फर्म से बाबू इन्द्रचद का १७ वर्षों का व्यावसायिक सम्बन्ध था।

सोनावत परिवार ने अपना नर-रत्न खोकर भी बीकानेर एवं कलकत्ते में जो यश अर्जित किया है उसका मूल्यांकन मुद्रा मे नहीं किया जा सकता। आने वाली पीढियां बाबू इन्द्रचन्द के महान बलिदान से प्रेरणा ग्रहण करेंगी। जब भी मानवता किसी संशय की स्थिति में होगी, उसका मार्ग प्रशस्त करने को ऐसे ऐतिहासिक बलिदान ही काम आवेंगे। कर्तव्यपरायणता के क्षेत्र में

ये बलिदान उदाहरणों का कार्य करेंगे। शहीदों का खून इतिहास के पन्नों को लालिमा, अरुणाई एवं चमक देता आया है और देता रहेगा। शहीद वह है जो अपने कर्तव्य-पालन में प्राणों का मोह छोड़ कर जुट जाए। वह फ्रंट का सिपाही है चाहे उसका फ्रंट कैसा भी हो। यहाँ विभाजक रेखा की कोई आवश्यकता नहीं है— मोर्चे पर वीर गति पाने वाला जवान भी कर्तव्य का पालन करता है और सामाजिक सेवा में प्रताड़ित एवं दंडित शहीद भी कर्तव्य का पालन करता है। कर्तव्य-पालन मुख्य बात है। बाबू इन्द्रचंद का बलिदान भी कर्तव्य-पालन के क्षेत्र में एक अनुपम उदाहरण है अतः सराहनीय एवं अनुकरणीय है। इस बलिदान में कर्तव्यपरायणता के अतिरिक्त साहस, शौर्य, स्वामीभक्ति; अडिग विश्वास एवं स्वाभिमान जैसे अनेक ऐसे गुण भी अपनी पराकाष्ठा में मिलते हैं जो मानवता को सज्जित करने एवं उसकी भी वृद्धि करने में काम आते हैं।

चतुर्थ परिच्छेद

शोक · · · संवेदना · · · श्रद्धांजलियाँ

बाबू इन्द्रचंद का महान बलिदान शहीदों की परम्परा की एक अटूट कड़ी है। यहाँ एक साधारण जीवन के सामान्य घटा-क्रम की बात नहीं है। इसमें मानवीय मूल्यों का जान की बाजी लगाकर सुरक्षित रखने की समस्या की बात है। इन्सानियत की राह पर खून के छींटे लगते आए हैं अपने को भस्मीभूत करके मानवता के रास्ते को कई नर-वीरों ने प्रकाशित किया है—सर्वस्व स्वाहा करके आने वाली पीढ़ियों को रास्ता बताने वाले सदैव कांटों की राहों पर चलते हैं, अन्याय और उत्पीड़न का मुकाबला करते हैं और संघर्षों एवं बलिदानों में से हंसते हंसते गुजरते हैं। तूफान उनके हौसले बढ़ाते हैं; आंधियां उन्हें मनोबल देती हैं और अग्नि परीक्षाएं उन्हें कुन्दन बनाती हैं। इसी क्रम के बलिदानों में बाबू इन्द्रचंद ने भी अपने पुनीत हस्ताक्षर किए और अपने प्राणोत्सर्ग से उन सब के मस्तक ऊंचे कर दिए जिनको इन्सानियत की खूबियों में विश्वास है।

पीढ़ी दर पीढ़ी संसार में आवागमन का क्रम चलता रहता है। करोड़ों के प्रस्थान और करोड़ों के आगमन से सृष्टि का ताना बाना बुना जाता है जन्म मरण का चक्कर इन्सान के साथ सदा जुड़ा रहता है। जितनी बार थालियाँ बजती हैं; जितनी बार गर्भस्थ शिशु संसार में प्रवेश करता है उतनी ही बार रुदन क्रंदन एवं विलाप के अवसर भी आते हैं।

> "जातस्य हि ध्रुवो मृत्युर्ध्रुवो जन्म मृतस्यच।
> तस्माद् अपरिहार्येऽर्थे न त्वम् शोचितुमर्हसि॥"

हर जन्मने वाला मरता है क्योंकि मानव मरणोन्मुखी है, नश्वर है। सर्जन में विसर्जन छिपा हुआ है क्योंकि जीवन नाशवान है, क्षणभंगुर है। पानी के बुलबुले अथवा तप्त तवे की बूंद की तरह हम सब हर समय विसर्जित होने की कतार में खड़े रहते हैं। इतिहास कोटि कोटि प्राणियों का कोई हिसाब नही रखता है। वे एक जुलूस की तरह आते हैं और चले जाते हैं– इतिहास की डस्ट-बिन (रद्दी की टोकरी) में समय के हाथ उन्हें झाड़ कर फेंक देते हैं। विस्मृतियों की धूल की तहों में ऐसे अरबों लोग दबे पड़े हैं। गहरे……खूब गहरे। कुछ लोगों को इतिहास उठाता है। वे चाहे उसके 'कोल्ड स्टोरेज' में ही पड़े रहें; सुरक्षित अवश्य रहते हैं। उनकी याद शाश्वत रहती है; उनकी जिन्दगी प्रेरणा पुंज बनी रहती है, और उनकी कुर्बानी अमर हो जाती है। ऐसे लोग ही माता-पिता, मातृभूमि एवं प्रकृति के ऋण से उऋण हो पाते हैं। शहीद बाबू इन्द्रचंद इन्हीं लोगों में से एक थे।

वे तो चले गए- एक न एक दिन हमें भी जाना है। कृतज्ञ साथी और सम्बन्धी; मित्र और परिवार; जाने पहचाने व ज्ञात-अज्ञात लोग उन्हें कभी नहीं भुला पाएंगे। उनकी स्मृतियों में बाबू इन्द्रचंद का बलिदान हमेशा के लिए एक अविस्मरणीय घटना बना रहेगा। वे श्रद्धा से उनके त्याग के आगे नतमस्तक होते रहेंगे। हर साल ९ अप्रेल आयगा यह याद दिलाता हुआ कि इसी दिन कर्तव्य की बलिवेदी पर एक अमूल्य भेंट चढ़ाई गई थी, इसी दिन स्वामी भक्ति के यज्ञ में एक आहुति लगी थी, इसी दिन बलिदान की मांग करने वाली शक्ति को तृप्त किया गया था। सब उन्हें श्रद्धा, सम्मान एवं स्नेह के साथ याद रखेंगे। सुभद्राकुमारी चौहान की कविता से स्वर मिलाते हुए हम भी कह सकते हैं कि:—

> आओ बाबू याद रखेंगे, हम कृतज्ञ साथी सारे।
> दसों दिशाओं में गूंजेंगे जयजयकारों के नारे॥

जब तक मानवता जीवित है; जब तक होवेंगे सब काम।
जब तक धर्म-ध्वजा फहरेगी, तेरा अमर रहेगा नाम॥
तुमने मन पौरुष का परिचय दुनिया भर में दिखा दिया।
मूल्य वतन का जितना हो, अपने प्राणों से चुका दिया॥
कदम नहीं डिगने पाए तुम कभी नहीं हिम्मत हारे।
जाओ बाबू याद रखेंगे हम कृतज्ञ साथी सारे॥

बाबू इन्द्रचंद उन विरले लोगों में से थे जिन्होंने माता का दूध नहीं लजाया, मातृभूमि का मस्तक शर्म से नहीं झुकाया तथा सम्बन्धियों को लज्जित नहीं किया। उनका बलिदान पीढ़ियों के लिए सन्देश बन गया है। उनके प्राणोत्सर्ग की बात अपने आप में एक महान घटना सिद्ध हुई है। उनके निधन पर सगे-सम्बन्धी, मित्र, जान-पहचान वाले तथा परिचित-अपरिचित सभी लोग स्तब्ध रह गए– सबने इस क्षति को अपने लिए अत्यंत दुर्भाग्य का विषय माना। स्थान-स्थान पर दिवंगत आत्मा को श्रद्धांजलियाँ की गई। सबने भगवान से उस आत्मा को शांति प्रदान करने की प्रार्थना की।

अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए अंग्रेजी व अर्थशास्त्र में एम.ए.; परम् विद्वान एवं सुलझे हुए विचारों के मनीषी श्री रामरतन आचार्य ने कहा– "आज का युग भौतिकवाद का युग है। इस युग में मानव भौतिक सुख की प्राप्ति के लिए अनन्त आवश्यकताओं का अनुभव करता है। चूंकि आवश्यकताओं की पूर्ति (सन्तुष्टि) धन से होती है इसीलिए आधुनिक युग में येनकेन प्रकारेण अधिकतम धन प्राप्त करना ही मनुष्य की क्रियाओं का लक्ष्य बन गया है। इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए मानव ने ईमानदारी को ताक पर रख दी है और वह डकैती चोरी, रिश्वत, गबन, हत्या करना आदि दुष्प्रवृत्तियों का शिकार बन गया है। आज भारत में वस्तुतः इन्हीं दुष्प्रवृत्तियों का चहुँ ओर बोल-बाला है।

भारत की पुण्य भूमि आज भी कुछ आदर्श ईमानदार व्यक्तियों को अपने गोद में लिए हुए है। इसका ज्वलन्त उदाहरण अमर शहीद इन्द्रचंद सोनावत है जिसने दिनांक ९ अप्रेल १९६९ को कलकत्ते में अपने मालिक के धन का रक्षार्थ अपने प्राणों का बलिदान कर दिया था। उसके प्राणान्त की आश्चर्यजनक एवं वेदनापूर्ण घटना से सारे शहर कलकत्ते में शोक की लहर फैल गई। दूकानें व दफ्तर पूर्णतः बन्द रहे। हजारों व्यक्तियों ने सादर श्रद्धांजलि भेंट करने हेतु उसकी अन्त्येष्ठि में भाग लिया। भारत के प्रायः सभी समाचार-पत्रों में भी उसकी प्रशंसा के लेख प्रकाशित हुवे थे। उसका प्राणोत्सर्ग भारतवासियों के लिए प्रेरणा का स्रोत है।"

"भाई इन्द्रचन्द सोनावत राजस्थान में बीकानेर नगर के एक कुलीन जैन सोनावत परिवार में विक्रम संवत १९९५ श्रावण कृष्णा दूज को पैदा हुआ था। उसका समस्त परिवार ईमानदारी के लिए प्रसिद्ध है। धन्य है वह मालिक भी जिसे इन्द्रचन्द जैसा ईमानदार कर्मचारी मिला। ऐसे इमानदार व्यक्ति विरले ही होते हैं। भाई इन्द्रचन्द सोनावत को श्रद्धांजली अर्पित करते हुए भगवान से हम प्रार्थना करते हैं कि भारत के हर परिवार में वे ऐसे व्यक्ति पैदा करें ताकि बेईमानी भारत से हमेशा के लिए विदाई ले ले।"

ॐ शांति ॐ शांति ॐ शांति — रामरतन आचार्य M.A;LL.B

अर्थशास्त्र के ज्ञाता एवं विधिवेत्ता श्री रामरतन आचार्य के उद्गार अनेकानेक हृदयों की भावनाओं को अभिव्यक्ति देने वाले हैं। श्री आचार्य एक सामाजिक कार्यकर्ता हैं एवं समाज के संदर्भ में मूल्यों के रक्षण का महत्व जानते हैं। उनका यह कथन कि ऐसे ईमानदार आदमी विरले ही होते हैं सर्वथा सही है।

बाबू इन्द्रचन्द के निधन की क्षति को हर वर्ग एवं सम्प्रदाय के व्यक्ति ने महसूस किया। इस श्रेणी में कई प्रशासनिक अधिकारी

भी आते हैं। जो व्यक्ति जीवन भर सरकारी क्षेत्र में भिन्न-भिन्न दायित्वों का पालन करते हैं वे स्वामी भक्ति, कर्तव्य परायण, निष्ठा एवं साहस के गुणों की कद्र करना जानते हैं। सारी सरकारी व्यवस्था इन गुणों के अभाव में पंगु हो जाती है। उच्च प्रशासनिक अधिकारियों ने भी बाबू इन्द्रचंद के इस अभूतपूर्व बलिदान में सत्य, सेवा-भाव, स्वामिभक्ति, साहस, सहनशक्ति आदि गुणों का उत्कर्ष देखा और उसकी सराहना की। इन श्रद्धा व्यक्त करने वालों में बाबू चम्पालाल कोचर एवं श्री कन्हैयालाल कोचर प्रमुख हैं।

श्री चम्पालाल कोचर ने अपने जीवन का अधिकांश भाग प्रशासनिक सेवा में व्यतीत किया और वे जिलाधीश उदयपुर के पद से सेवा-निवृत हुए। वे B A; LL B. होने के साथ I A S. हैं तथा अपनी प्रशासनिक कुशलता की छाप छोड़ने वालों में हैं। अवकाशप्राप्त जिलाधीश श्री कोचर ने इन शब्दों में अपनी श्रद्धांजलि अर्पित की है। 'बाबू इन्द्रचंद सोनावत की दुखद मृत्यु का समाचार सुन कर बड़ा दुःख हुवा। वह कर्तव्यनिष्ठ और ईमानदार था। अपने मालिक के प्रति पूर्ण वफादारी का परिचय देते हुए वह बलिदान हो गया। प्रभु इस आत्मा को शांति प्रदान करे तथा परिवार वालों को इस असहनीय दुःख को सहन करने की शक्ति दे"। यह कोई औपचारिक श्रद्धांजलि मात्र नहीं है। इसमें एक ही पंक्ति में वफादारी की बात बहुत ही सशक्त शब्दों में कह दी गई है।

इसी परम्परा का निर्वाह करते हुए श्री कन्हैयालाल कोचर ने भी कर्तव्य-भावना का जिक्र अपनी श्रद्धांजली में किया है। श्री कन्हैयालाल कोचर ने भी राजकीय सेवा में उच्च पदों पर कार्य किया है। वे B.A; LL. B. विशारद होने के साथ-साथ प्रशासनिक क्षेत्र में अत्यन्त कुशल एवं सामाजिक क्षेत्र में सच्चे सेवा-भावी

रहे हैं। विकास अधिकारी सरदारशहर के पद से सेवा निवृत्त हो कर आजकल आप अपना अधिकांश समय सामाजिक कार्यों में व्यतीत करते हैं। श्री कोचर के शब्दों में "बाबू इन्द्रचन्द सोनावत की दुःखद मृत्यु का सामाचार सुनकर दिल को गहरा धक्का लगा पर किया क्या जाय ? होनी का ऐसा ही योग था। मरना सबको है पर वह अपने कर्तव्य पर मरा। मर कर अमर हो गया। प्रभु उस आत्मा को शांति प्रदान करे।'

दो प्रशासनिक अधिकारियों की इन श्रद्धांजलियों में एक बात मिलती है और वह यह कि इन दोनों की राय में बाबू इन्द्रचन्द ने कर्तव्य-परायणता के क्षेत्र में महान बलिदान किया। स्वर्गीय श्री मैथिलिशरण गुप्त की इन पंक्तियों को श्री इन्द्रचन्द ने पूर्णरूपेण आत्मसात किया था।

होगी सफलता क्यों नहीं, कर्तव्य-पथ पर दृढ़ रहो।
आपत्तियों के वार सारे वीर बन कर के सहो॥

कवि की वाणी युग को स्पंदन देती है। वही युग का सच्चा प्रतिनिधित्व भी करती है। काव्य और कला मिल कर जीवन को जीने योग्य बनाते हैं। श्री इन्द्रचन्द को जहां अर्थशास्त्री की श्रद्धा मिली; प्रशासनिक अधिकारियों की प्रशस्ति मिली वहां उनके सम्मान में एक कवि एवं साहित्य-सृष्टा की वाणी भी निसृत हुई। राजस्थान के हास्य-व्यंग्य के कवि श्री भवानीशंकार व्यास के शब्दों में "भाई इन्द्रचन्द सोनावत का यौवन के उत्कर्ष-काल में आकस्मिक निधन जहां अत्यन्त हृदय विदारक है, वहां उनका अलौकिक बलिदान एवं ऐतिहासिक प्राणोत्सर्ग मां मरुधरा के भाल को समुन्नत करने एवं हमारे गौरव की वृद्धि करने में पर्याप्त हैं।"

"उनकी कर्तव्य-निष्ठा, स्वामी-भक्ति, अपूर्व आत्मिक शक्ति एवं साहस वृति समवयस्कों के लिए ही नहीं अपितु आने वाली

पीढ़ियों के लिए भी अनुकरणीय बात रहेगी। वे जीवन में महान अथवा महानतर भले हो न बन सके हों, मृत्यु में अवश्य ही महान्तम बन गए। उन्होंने मृत्यु का वरण करके कर्तव्य की रक्षा की। आततायियों के इरादों को कुचल कर स्वामी-भक्ति का कीर्तिमान स्थापित किया एवं अपने प्रिय प्राणों की आहुति देकर अपूर्व साहस का परिचय दिया। उनकी शहीदाना अलविदा स्वयं अपना रंग लाएगी। इनका बलिदान उन्हें महान विभूति बना देगा। वे मृत्यु से कतराने वालों में नहीं उसकी गोद में बैठ कर मुस्काने वालों में थे।

> मृत्यु अवश्यम्भावी है फिर भी हम उससे डरते हैं।
> पड़े रोग शैया पर कितने सड़ सड़ करके मरते हैं॥
> मृत्यु मुबारक हो उसको जो अमिट चिन्ह छोड़ अपने।
> मरना ना दगरा है यारो मर कर भी जो अमर बने॥

"भाई सोनावत जी मर कर अमर हो गए। हमें उन पर गर्व होना ही चाहिए।"

पंडित श्री रमणलाल आचार्य ने शहीद बाबू इन्द्रचन्द को निकट से देखा था। एक ही मुहल्ले के होने के कारण पंडित जी बाबू इन्द्रचन्द के गुणों से परिचित थे। उनकी श्रद्धांजली में आत्मीयता है; 'निकट' होने के भाव हैं तथा "पारिवारिक" परिवेश है। आचार्य जी के शब्दों में "चिरु इन्द्रचन्द सोनावत की मृत्यु का समाचार सुन कर दिल को गहरा धक्का लगा। वह अपना फर्ज अदा करते स्वर्ग सिधार गया। जीवन क्षण भंगुर है और आत्मा अमर। उसका जीवन धन्य है जिसकी जग में शोभा है। प्रभु उसको शांति प्रदान करे। यही मंगल कामना है।" आचार्य जी ने पिछली दो पंक्तियों में शाश्वत सत्य की ओर इशारा किया है। वस्तुतः जीवन नश्वर एवं क्षणभंगुर है। आत्मा तो अमर है ही। मनुष्य के साथ कुछ नहीं जाता। उसकी कीर्ति ही उसे

अमर बनाती है। पंडित रमणलालजी के उपरोक्त शब्द बा
इन्द्रचन्द के जीवन को कुछ ही शब्दों में उद्घाटित करने में समर्थ
हुए हैं।

शहीद बाबू इन्द्रचन्द के गुणों से प्रभावित होने वालों में कुछ
ऐसे व्यक्ति भी हैं जो विभिन्न राजकीय विभागों में सेवा कार्य
करते हैं। हमारा प्रयोजन यह है कि विभिन्न क्षेत्रों में कार्य करने
वाले — प्रशासनिक अधिकारी, अर्थशास्त्री, साहित्यकार, भगवद्
भक्त एवं सरकारी कर्मचारी इस क्षति को समान भाव से शोक
पूर्ण मानते हैं। यह क्षति सबके लिए अत्यन्त दारुण दुःख उत्पन्न
करने वाली थी। कई सरकारी विभागों में कार्य करने वाले कर्म
व्यक्तियों ने इस अवसर पर अपनी शोक संवेदनाएं अभिव्यक्त
की हैं। उनमें पंडित राधाकृष्ण रंगा का नाम यहाँ उल्लेखनीय
है। रंगाजी एक कर्मठ सामाजिक कार्यकर्ता एवं वरिष्ठ लिपि
हैं। वे मनुष्य के गुणों के पारखी; आस्तिक एवं सहिष्णु हैं।
नियति के चक्र के आगे नतमस्तक होकर अपने कर्तव्यपालन में
विश्वास करने वाले व्यक्ति हैं। उनके शब्दों में बाबू इन्द्रचन्द
सोनावत की दुःखद मृत्यु का समाचार सुनकर बहुत दुःख हुआ।
परन्तु नियति के आगे वश नहीं चलता। बाबू इन्द्रचंद एक विनीत,
सरल स्वभाव, कर्तव्य के प्रति निष्ठावन तथा होनहार युवक थे।
कर्तव्यनिष्ठा के तो वे मूर्तिमान स्वरूप ही थे। जिन्होंने आखिरी
समय में भी मालिक के प्रति अपनी कर्त्तव्यनिष्ठा का पालन करते
हुए अपने माता-पिता तथा प्रिय परिवार का तथा अपने बच्चों
का भी मोह न लाते हुए अपने भू-तत्व शरीर तक की भी आहुति
दे दी। इनकी मृत्यु से इनके परिवार को आघात लगा है। ईश्वर
से प्रार्थना है कि उनके शोक संतप्त माता-पिता, परिवार के सगे
सम्बन्धीजनों को इस असहनीय कष्ट सहने की शक्ति प्रदान
करे।"

ऐसे ही एक मित्र हैं श्री मोहनलाल कोचर। आप तामीरात में मजांची है तथा इस दारुण दुःख के अवसर पर सोनावत परिवार के भागीदार बनने वाले मित्रो मे से एक हैं। इनके शब्दो मे भी जहाँ नियति की शक्ति एवं मनुष्य की असहाय स्थिति का वर्णन मिलता है वहा बाबू इन्द्रचन्द की दिग्विजय आत्मा की शान्ति की प्रार्थना भी सम्मिलित की गई है। श्री मेहता—मोहनलाल कोचर के अनुसार :: श्री इन्द्रचन्द सोनावत आत्मज श्री जोगीलाल जी सोनावत का आकस्मिक देहान्त होने की खबर सुन कर मेरे और मेरे परिवार वालों पर गहरी चोट लगी। मगर परम-पिता परमात्मा के आगे किसी का जोर नहीं चलता। अतएव मैं सपरिवार उस स्वर्गीय आत्मा के प्रति श्रद्धाजलि अर्पित करता हुआ भगवान से प्रार्थना करता हूं कि उस दिग्विजय आत्मा को शान्ति प्रदान करे और बन्धुओं को इस कष्ट को सहन करने की शक्ति प्रदान करे। यह मेरी व परिवार की हार्दिक इच्छा है।"

[मेहता मोहनलाल कोचर]

इस प्रकार सभी श्रद्धाजलियों का प्राय एक ही मतव्य है। दिवगत आत्मा की शांति की प्रार्थना के साथ ही साथ सबने प्राय उस होनहार नवयुवक की भूरि २ प्रशंसा की है। उसके सद्गुणो का प्रकाश फैलना शुरू हुआ ही था कि काल के क्रूर चक्र ने उसे धराधाम से उठा लिया। उसने भी राजा शिवि की तरह अपने वचनों का पालन किया। राजा शिवि ने कबूतर की प्राण-रक्षा के लिए अपने प्रिय प्राणों की आहुति लगा देने मे कायरता नहीं दिखाई तो बाबू इन्द्रचन्द ने स्वामी-भक्ति के लिए प्राणो को होम दिया। राजा शिवि और बाज के बीच के इस सवाद में बाबू इन्द्रचन्द के जीवन से भी कुछ समानता मिलती है।

रम्य रूप अनूप वैभव छोड सुख आशा सभी।
क्या कबूतर के लिए नृप छोड सकते हो सभी?

" मेरा मन अभी तक भी नहीं मान रहा है कि श्री इन्द्रचंद का स्वर्गवास हो गया है हालाँकि श्री इन्द्रचंद मनुष्य देह में अब हमारे बीच नहीं रहे फिर भी उनकी आत्मा अवश्य ही एक दिव्य योनि को प्राप्त हुई है और वह अमर है।"

मैं स्वर्गीय श्री इन्द्रचंद की दिव्य आत्मा को श्रद्धांजलि अर्पित कर भगवान से प्रार्थना करता हूं कि वे उनके परिवार वालों को इस असहनीय वज्रपात को सहने की पूर्ण शक्ति दे।"

इन विचारों में हमें बार बार विधि के विधान की बात देखने को मिलती है। इस होनी अथवा नियति के आगे सभी को असहाय मूक दर्शक बनना पड़ता है। यह चक्र स्वेच्छाचारिता से चलता रहता है। होनी को तो दशरथ जैसे तेजस्वी नरेश भी नहीं टाल सके थे। मर्यादा पुरुषोत्तम राम के साथ भी इस नियति ने कई नाटक खेले थे। हमारे युग में भी हमने होनी का एक चमत्कार सन् १९६६ की जनवरी में देखा जिसकी किसी ने कल्पना ही नहीं की थी हमारे स्वर्गीय प्रधान मंत्री श्री लालबहादुर शास्त्री भारत की महान विजय की गरिमा लेकर ताशकंद गए थे। वहां ऐतिहासिक ताशकंद समझौता हुआ तथा सारा भारत उत्सुकता से उनके स्वदेश आगमन की प्रतीक्षा कर ही रहा था कि एकाएक वह हृदय विदारक समाचार मिला जिसने सबको स्तब्ध कर दिया। होनी का यह नाटक भी विलक्षण ही था। एक महान विभूति ने ज्योंही अपना कार्य संपन्न किया; उसे संसार मंच से उठा दिया गया। बाबू इन्द्रचन्द के साथ भी कुछ ऐसा ही हुआ था। बीकानेर में माता-पिता, भाई–बहन सभी उनकी प्रतीक्षा में थे पर उनकी जगह उनके बारे में समाचार आए जो दारुण, निकट एवं वज्रघाती थे।

श्री राधाकृष्ण रंगा और श्री दयानंद बड़गूजर की श्रद्धांजलि की ध्वनि अन्य शोक संतप्त मित्रों के स्वरों में भी मिलती है।

ऐसे ही एक मित्र है श्री मोहनलाल कोचर। आप तामीरान में सहायो है तथा इस दारुण दुःख के अवसर पर सोनावत परिवार के भागीदार बनने वाले मित्रो में से एक हैं। इनके शब्दों में भी जहां नियति की शक्ति एवं मनुष्य की असहाय स्थिति का वर्णन मिलता है वहां बाबू इन्द्रचन्द की दिवंगत आत्मा की शांति की प्रार्थना भी सम्मिलित की गई है। श्री महता—मोहनलाल कोचर के अनुसार :: श्री इन्द्रचन्द सोनावत आत्मज श्री जोगीलाल जी सोनावत का आकस्मिक देहान्त होने की खबर सुन कर मेरे और मेरे परिवार वालो पर गहरी चोट लगी। मगर परम-पिता परमात्मा के आगे किसी का जोर नहीं चलता। अतएव मैं सपरिवार उस स्वर्गीय आत्मा के प्रति श्रद्धांजलि अर्पित करता हुआ भगवान से प्रार्थना करता हू कि उस दिवंगत आत्मा को शांति प्रदान करे और बन्धुओ को इस कष्ट को सहन करने की शक्ति प्रदान करे। यह मेरी व परिवार की हार्दिक इच्छा है।

[महता मोहनलाल कोचर]

इस प्रकार सभी श्रद्धांजलियो का प्रायः एक ही मंतव्य है। दिवंगत आत्मा की शांति की प्रार्थना के साथ ही साथ सबने प्रायः उस होनहार नवयुवक की भूरि २ प्रशंसा की है। उसके सद्गुणों का प्रकाश फैलना शुरू हुआ ही था कि काल के क्रूर चक्र ने उसे धरा-धाम से उठा लिया। उसने भी राजा शिवि की तरह अपने वचनो का पालन किया। राजा शिवि ने कबूतर की प्राण-रक्षा के लिए अपने प्रिय प्राणों की आहुति लगा देने मे कायरता नहीं दिखाई तो बाबू इन्द्रचन्द ने स्वामी-भक्ति के लिए प्राणों को होम दिया। राजा शिवि और बाज के बीच के इस सवाद मे बाबू इन्द्रचन्द के जीवन से भी कुछ समानता मिलती है।

> राज्य का अनूप वैभव छोड सुर आशा सभी।
> क्या कबूतर के लिए नृप छोड सकते हो सभी?

भूप ने हंस कर कहा यह भी मुझे स्वीकार है।
प्राण दे प्रण टालना प्राचीन शिष्टाचार है॥

बाबू इन्द्रचन्द ने भी प्राण देकर प्रण को टालने के प्राचीन शिष्टाचार का निभाया तथा नवयुवकों के लिए एक उदाहरण प्रस्तुत किया।

इसी क्रम को श्रद्धांजलियों से सार्वजनिक निर्माण विभाग बीकानेर के वरिष्ठ लिपिक एवं हिसाब परीक्षक श्री सुमेरमल सुखानी का नाम विशेष उल्लेखनीय है। श्री सुखानी जी बाबू इंद्रचंद के परिचित सज्जनों में से होने के अतिरिक्त पारिवारिक परिवेश से भिन्न हैं। वे नमक हलाली को जीवन का एक महत्व-पूर्ण गुण मानते है। सुखानी जी के शब्द यहाँ ज्यों के त्यों उद्धृत किए जाते हैं:: श्री इन्द्रचंद सोनावत सुपुत्र श्री जोगीलालजी सोनावत के आकस्मिक देहावसान का समाचार सुनकर गहरा दुःख हुवा। बाबू इद्रचंद सोनावत से मैं कई बार मिल चुका था।

"वे एक मिलनसार, सहृदय व सेवा-भावी युवक थे। वे अपने माता-पिता के अनन्य भक्त थे। उनके अपने भाइयों के प्रति आदर भ्रातृत्वभाव व वात्सल्य भी भुलाया नहीं जा सकता। अन्तिम समय में भी उन्होने अपनी कर्तव्य-निष्ठा का परिचय देते हुए सेठ जी की रकम बचाने के लिए अपनी जान की बाजी लगादी।"

"ऐसे व्यक्ति विरले ही होते हैं जो अपनी नमक हलाली का इस तरह परिचय देते हैं। मैं जिनेश्वर से प्रार्थना करता हूं कि उनकी स्वर्गस्थ आत्मा को शान्ति प्रदान करे और उनके परिवार को इस अपार दुःख को झेलने की शक्ति दे। यह मेरी कामना है।"

—सुमेरमल सुखानी

इस असार संसार में जहां लोग माया-जाल में फंस कर अनेक अनेक कुकर्म करते हैं वहां कई अनुकरणीय व्यक्ति समस्त विकारों के विश्व में रहते हुए भी उनसे दूर रहते हैं। वे विकारों को छोड़

ये सद्गुणों को ग्रहण करते हैं। लक्ष्मी की चकाचौंध उन्हें नहीं लुभा सकती। कर्तव्य की पुकार उन्हें आगे बढ़ने का सन्देश देती है। वे हंस की तरह 'नीर-क्षीर विवेक' के धर्म का पालन करते हैं। महाकवि महात्मा तुलसीदास के शब्दों में सांसारिक विकारों से दूर रहने वाले व्यक्ति सन्तों की श्रेणी में आते हैं।

"जड़ चेतन गुन दोष मय विस्व कीन्ह करतार,
संत हंस गुन गहहिं पय परिहरि वारि विकार।"

स्वर्गीय बाबू ईश्वरचन्द भी गुणों के पारखी तथा अनुरागी थे अतः उन्होंने समस्त विकारों को अपने जीवन से पृथक रखा तथा अन्त तक अपने धर्म का निर्वाह किया। अतः वे सन्त परम्परा में आते हैं। श्री कुबेरनाथ गुसांई ने भी यह कह कर कि ऐसे व्यक्ति विरले ही होते हैं जो अपने सन्त स्वभाव का इस तरह परिचय देते हैं" उपरोक्त कथन की पुष्टि की है।

मीरां ने लिखा है "घायल की गति घायल जाने जे कोई घायल होय"। श्री ईश्वरचन्द के निधन का दुःख निःसन्देह मित्रों तथा परिचित सज्जनों को हुआ पर जितना अधिक सन्ताप परिवार वालों को हुआ उसकी कल्पना करना भी कठिन है। उनके सामने एकाएक दुःख का पहाड़ टूट पड़ा। उनके सारे स्वप्न चकनाचूर होकर टूटे कांच की तरह सामने बिखर गए। उन्होंने हृदय पर पत्थर रख कर इस महान दुर्घटना को सहन किया। जहर के घूंट पीकर भी अपने आप को संयम में रखा। सहन-शक्ति की राख के नीचे दुःख की आग अभी भी सुलग रही है और यदा कदा यह याद उभर कर ऊपर आ जाती है। जिनके कलेजे फौलाद के बने हों वे ही ऐसी चोट खाकर नहीं तिलमिलाते। धार्मिक परिवेश में पले होने के कारण इस परिवार ने सराहनीय धैर्य का प्रदर्शन किया। फिर भी उनकी श्रद्धांजलियों में शोक का उमड़ता हुआ सागर देखा जा सकता है। श्री बछराज सोनावत (अग्रज) ने अपना शोक

अत्यन्त ही संयम के साथ इन शब्दों में प्रदर्शित किया है : : "अपने प्रिय भ्राता बाबू इन्द्रचंद सोनावत की मृत्यु से असहनीय वेदना हुई। सारा परिवार शोकसागर में डूब गया पर किया क्या जाय? मृत्यु एक अवश्यंभावी घटना है जो किसी भी परिस्थिति में टाली नहीं जा सकती।"

"वह अनेक गुणों का भण्डार था।। बड़ा सेवा-भावी, लोकप्रिय, कर्मयोगी और मिलनसार था। मनुष्य आता है और चला जाता है पर उसकी मधुर स्मृति ही शेष रह जाती है। यही बात बाबू इन्द्रचंद के विषय में लागू होती है। प्रभु उस आत्मा को शांति प्रदान करे तथा हमारे शोक संतप्त परिवार को यह वज्रपात सहने की शक्ति दे।"

श्री बछराज सोनावत ने अपने सहोदर भाई के निधन पर जो विचार प्रकट किए हैं वे वस्तुतः उनके शोक-संतप्त हृदय के उद्गार हैं। इस संसार में जहाँ पुत्र, धन, स्त्री, घर और परिवार सुलभ हो सकते हैं वहाँ सहोदर भाई की कमी कोई भी पूरी नहीं कर सकता। लक्ष्मण को शक्तिबाण लगने पर अग्रज राम का विलाप इन शब्दों में व्यक्त हुवा था।

सुत वित नारि भवन परिवारा।
होहिं जाहिं जग बारहिं बारा॥
अस विचारहिं जियं जागहु ताता।
मिलइ न जगत सहोदर भ्राता।

आज इस महान क्षति की पूर्ति करना विधाता के लिए भी संभव नहीं है। परिवार वाले केवल स्मृतियों के बल पर ही इस बाबू इन्द्रचंद से मानसिक सम्पर्क साध सकते हैं। चार छोटी छोटी कन्याएं शहीद की याद को और अधिक ताजा बना देती है।

श्री बछराज सोनावत एवं उनके छोटे भाइयों को इस सहोदर भाई के असामयिक निधन पर जो वेदना हुई वह शब्दों में प्रतिबिम्बित

स्व० वाबू इन्द्रचन्द सोनावत

कर्मनिष्ठ अग्रज वछराजजी सोनावत

नहीं की जा सकती। हृदय से उमड़ते दुःख को अक्षरों में नहीं बांधा जा सकता। उस दर्द को भाषा के माध्यम से व्यक्त करना नितान्त असम्भव है। फिर भी सांकेतिक रूप से उस आधार पर वेदना का प्रासंगिक स्वरूप सभी भाइयों की संयुक्त श्रद्धांजलि में देखा जा सकता है। दुःखी एवं शोक संतप्त भाइयों के अनुसार 'प्रिय भ्राता बाबू इन्द्रचंद सोनावत की दुःखद मृत्यु से हमारा दाहिना हाथ टूट गया। वह योग्य भाई था। एक भाई में जो गुण होने चाहिए वे सब उसमें मौजूद थे। वह हमेशा हमारे सारे परिवार का पूरा पूरा ध्यान रखता था। वह हमारे परिवार का एक रत्न था। उसके चले जाने से हमारा परिवार सूना हो गया पर यह सब तो भावी का योग था। यहाँ पर किसी का वश नहीं चलता। जैसा कि कहा गया है :—

> जनम मरण सब सुख दुख भोगा।
> हानि लाभ प्रिय मिलन वियोगा॥
> काल कर्म वश होई गुसाईं।
> बरबस रात दिवस की नाईं॥

प्रभु उस आत्मा को शांति प्रदान करे और हमें इस महान दुःख को सहन करने की शक्ति दे। (भाई बछराज सोनावत, सुगनलाल सोनावत, मेघराज सोनावत, कन्हैयालाल सोनावत)

भाइयों की इस अपार वेदना के साथ ही बाबू इन्द्रचंद सोनावत की बहिनों के सन्ताप; उनकी करुणा; उनकी मनोदशा आदि का चित्रण करने का भी यहाँ प्रयास किया जा रहा है। राखियाँ बांध कर अपने भाई से रक्षा का वचन लेने वाली ये बहिनें इस महान आघात को अत्यन्त विषाद के साथ ही सहन कर सकी हैं। यह हृदय विदारक समाचार उनके लिए वज्रपात के समान था। उनके शब्दों में हृदय की सच्ची एवं स्वाभाविक भावना का चित्रण है। बहिनों के अनुसार "लघु भ्राता इन्द्रचंद की मृत्यु से

हमें बड़ा दुःख हुवा। वह एक योग्य भाई था। उसका अभाव हमें बहुत खटता है और शायद हमेशा समय समय पर खटता रहेगा। उसकी मिलन सारिता बेजोड़ थी। प्रभु उस आत्मा को शान्ति प्रदान करे। (भगिनि — सूरजदेवी, भीखीदेवी, भंवरीदेवी, माणक देवी, लक्ष्मीदेवी, इन्द्रदेवी, बरजीदेवी, शारदादेवी)

बहिनों ने व्यक्त किया कि इन्द्रचंद की याद समय समय पर आती रहेगी। चाहे भाई द्वितिया हो अथवा रक्षाबन्धन, चाहे तीज त्योहार हो अथवा नागपंचमी चाहे कोई उत्सव हो या समारोह, भाई की याद उनके संतप्त हृदयों को और अधिक दुःखी बनाती रहेगी। इस अपार वेदना का कोई थाह नहीं है।

बाबू इन्द्रचंद का वैसे तो सभी बहिनों से समान स्वाभाविक प्यार था पर परिस्थितियों ने उसे बरजी बाई के अधिक निकट ला दिया था। उसका कलकत्ता प्रवास भी बरजी बाई के आग्रह पर ही हुवा था अतः उसकी मृत्यु पर बरजी बाई का विशेष दुःख समझ मे आ सकता है। अपनी पृथक श्रद्धांजलि में श्रीमती बरजी बाई ने भाई इन्द्रचंद के गुणों का वर्णन करते हुए अपने व्यावसायिक दायित्वों में उसके योगदान का भी जिक्र किया है। बरजी बाई की मानसिक व्यथा इन शब्दों में व्यक्त की गई है: —"इन्द्रचंद सोनावत की मृत्यु से मेरे दिल को गहरा धक्का लगा। मैं अवाक रह गई। होश उड़ गया पर किया क्या जाय? विधाता को ऐसा ही मंजूर था। वह बड़ा भाग्यशाली था। मेरे व्यापारिक कार्यों में बराबर सहयोग देता था। अच्छा सलाहकार था। दूर बैठे मेरे परिवार का पूरा ध्यान रखता था। उसके स्वर्गवास का समाचार सुन कर मुझ पर वज्रपात हो गया पर मौत के आगे लाचारी है। प्रभु उस आत्मा को शान्ति प्रदान करे व मुझे इस असहनीय कष्ट को सहन करने की शक्ति दे।" (बरजी देवी बछावत)

[illegible] पारिवारिक दुःख का चित्रण आगे के कुछ पृष्ठों में [illegible]

भली-भांति देख लिया है। अब हमारा लक्ष्य पाठकों को भारत के विभिन्न स्थानों से निकलने वाले दैनिक व साप्ताहिक समाचार पत्रों के विचारों अथवा टिप्पणियों से परिचित करना है। इसका प्रारम्भ हम कलकत्ता से निकलने वाले दैनिक समाचार पत्र "सन्मार्ग" से कर रहे हैं। "सन्मार्ग" ने अपने १२ अप्रेल १९६९ के अंक में मुख्य पृष्ठ पर एक विशाल चित्र मुद्रित किया गया है। इस चित्र में बाबू इन्द्रचन्द के पार्थिव शरीर को अन्त्येष्ठि के लिए ले जाते हुए एक विशाल जुलूस को दिखाया गया है। पत्र के अनुसार अपार जन समुदाय शहीद बाबू इन्द्रचन्द की शव यात्रा में सम्मिलित था। इसी अंक के अन्तिम पृष्ठ पर इस शव यात्रा का पूर्ण विवरण दिया गया है। नीचे कुछ पंक्तियां उद्धृत की जाती हैं।

"कलकत्ता, गुरुवार बड़ा बाजार में बढ़ती हुई गुण्डागर्दी के प्रतिवाद में आज बड़ा बाजार बन्द रहा। साथ ही कलाकार स्ट्रीट में बम-निक्षेप से मृत इन्द्रचन्द सोनावत के शव के साथ बड़ा बाजार के नागरिकों ने रायटर्स बिल्डिंग के समक्ष प्रदर्शन किया। शहीद इन्द्रचन्द सोनावत के शव के साथ सत्यनारायण पार्क से बड़ा बाजार के नागरिकों का एक जुलूस रायटर्स बिल्डिंग के लिए रवाना हुवा। रायटर्स बिल्डिंग में प्रदर्शनकारियों की ओर से एक शिष्ट मंडल ने जिसमें सर्व श्री सांवलराम गोयनका, रामगोपाल बागला, केशरदेव जाजोदिया, देवकीनन्दन मानसिंहका नेपाल राय, रामकृष्ण सरावगी जोशी निर्भीक, दुर्गाप्रसाद नाथानी, रामनाथ शर्मा, गीतेश शर्मा सागरमल शर्मा प्रभृति सम्मिलित थे। साथ मन्त्री श्री सुधीन कुमार से मुलाकात की तथा उनसे बड़ा बाजार के नागरिकों की जान-माल की रक्षा व्यवस्था करने की मांग की। शिष्ट मण्डल के नेता श्री सांवलराम गोयनका ने मन्त्री महोदय को गत बुधवार (९ अप्रेल) की रात्री में हुई घटना से अव-

गत कराते हुए कहा कि उक्त घटना से बड़ा बाजार के नागरिकों में विशेषकर व्यापारियों में बड़ा आतंक फैला हुआ है। वे अपने को अरक्षित महसूस करते हैं।"

पत्र में आगे मन्त्री महोदय के आश्वासन एवं उनके भाषण के कुछ अंश प्रकाशित किए गए हैं। कृषि मन्त्री डॉ० कन्हाई भट्टाचार्य के भाषण की भी एक पंक्ति पत्र ने प्रकाशित की है। दोनों भाषणों का आशय यही है कि मन्त्री महोदय समाज विरोधी तत्वों के दमन में जनता के सहयोग के आकाँक्षी हैं।

शव यात्रा के मार्ग को पत्र ने इन शब्दों में दिखाया है। 'वहां से (रायटर्स बिल्डिंग) जुलूस बड़ा बाजार स्ट्रीट, चितरंजन एवेन्यु, मछुआ बाजार स्ट्रीट, चितपुर रोड, स्टैण्ड रोड होते हुए नीमतल्ला घाट पहुंचा जहां अन्त्येष्ठि क्रिया सम्पन्न हुई।"

बड़ा बाजार की गुण्डागर्दी पर एक व्यंग्य करते हुए पत्र ने पृष्ठ २ कॉलम आठ पर "लस्टम पस्टम" में ये शब्द लिखे हैं। 'कलाकार स्ट्रीट तथा लेक क्षेत्र में हुई गुण्डागर्दी की भर्त्सना करते हुए नागरिकों ने असुरक्षा की भावना व्यक्त की है। केवल प्रस्ताव पास करने से अब कुछ होने को नहीं है। मोर्चे की सरकार केन्द्रीय सरकार से लड़े या यहां के गुण्डे बदमाशों से। मुख्य बात तो यह है कि अवांछनीय तत्वों पर अब किसी का कण्ट्रोल रहा नहीं। पुलिस बेचारी तो 'भीगी बिल्ली' बन गई है तब उपाय क्या है? बड़ा बाजार ऐसे गढ़ में ये वारदातें ?

'चस्मपुर आब है, लेकिन ये जिगर जलता है।
अजब तमाशा है बरसात में घर जलता है।"

'सन्मार्ग' ने अपने समाचारों में जो बिन्दु उठाए हैं, उनकी ध्वनि भारत के अन्य दैनिक व साप्ताहिक समाचार-पत्रों में भी सुनने को मिली है। कलकत्ते के इस दुःखद काण्ड की चर्चा भारत भर के अखबारों में व्यापक रूप से हुई तथा पश्चिमी बंगाल में

कई प्रभावशाली नेताओं ने उस पर अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त की। बीकानेर से निकलने वाले साप्ताहिक पत्र 'सत्य विचार' ने अपने २६ मई के अंक का पूरा पिछला पृष्ठ इसी प्रसंग को लेकर लिखा है। कलाकार स्ट्रीट में हुई इस निर्मम हत्याकांड की पत्र ने भर्त्सना की है तथा राजस्थान सरकार से यह मांग की है कि वह पश्चिमी बंगाल सरकार से इस घटना की जाच के लिए आग्रह करे। पत्र ने ऐसे प्रसंगों में राजस्थान सरकार के दायित्व की ओर भी इशारा किया है। पत्र के समाचारों का अविकल स्वरूप यहां उद्धृत किया जाता है—"बीकानेर, गत ९ अप्रेल को कलकत्ता की कलाकार स्ट्रीट पर बीकानेर के एक ३०-३५ वर्षीय नौजवान श्री इन्द्रचन्द सोनावत की कुछ अराजक तत्वों द्वारा जिस निर्ममता से हत्या की गई और उसके बाद पश्चिमी बंगाल सरकार का इस दुर्घटना के प्रति जो उपेक्षणीय दृष्टिकोण रहा वह न केवल निंदनीय ही है अपितु राजस्थानियों के लिए भविष्य में होने वाले व्यवहार का एक संकेत है।"

'श्री इन्द्रचन्द सोनावत ९ अप्रेल को अपनी दूकान से घर जा रहे थे कि कलाकार स्ट्रीट पर रात्रि के नौ सवा नौ बजे के करीब कुछ लोगों ने उन पर छुरे से हमला किया। श्री सोनावत के पास कुछ धन व कागजात बताए जाते हैं जिनकी रक्षा के प्रयत्न में उन्हें जान गंवानी पड़ी। इस प्रकार की चर्चा भी है कि उक्त गुण्डा तत्वों को यह आशंका हो गई थी कि श्री सोनावत ने उन्हें भली प्रकार से देख लिया है तथा आगे उन्हें पहचान लेंगे और उन गुण्डा तत्वों ने उनकी हत्या कर दी ताकि वे सिर उठा कर आगे भी चलते रहें।"

"रात्रि के ११ बजे श्रीसोनावत का जख्मी शरीर मारवाड़ी-रिलीफ सोसाइटी के अस्पताल ले जाया गया लेकिन कोई भी शक्ति उस नौजवान को न बचा सकी। शव का १० अप्रेल को पोस्टमार्टम हुआ

और ११ अप्रेल को मृत शव श्री सोनावत के परिवार जनों को मिल सका। ११ अप्रेल को कलकत्ता की सुत्ता पट्टी हरीसन रोड, कलाकार स्ट्रीट आदि बाजार बंद रहे तथा शव सहित लगभग २०-२५ हजार आदमियों का एक जुलूस रायटर्स बिल्डिंग (पश्चिमी बंगाल सरकार के मन्त्री जहां बैठते हैं) गया।"

"मानवीय हत्या के इस मामले के प्रति पश्चिमी बंगाल के सत्ताधारियों का जो व्यवहार रहा उसे कोई भी व्यक्ति लोकतांत्रिक नहीं कह सकता। एक प्रत्यक्षदर्शी ने संवाददाता को बताया कि २०-२५ हजार व्यक्ति मृत देह सहित आधा-पौन घण्टे तक प्रतीक्षा करते रहे कि कोई आए और दुःखद फरियाद सुने। लगभग पौन घण्टे बाद दो मंत्रीगण आये और वस्तु स्थिति से अवगत हुए बिना ही कहा कि 'यह सब बनी बनाई बात है। अगर आप लोग हमारे साथ रहोगे तो हम सहयोग करेंगे। २० वर्षों तक आप लोगों ने जो किया यह उसी का फल है। मंत्रियों ने २०-२५ हजार व्यक्तियों की इस मांग पर कि हत्या की न्यायिक जांच कराई जाए कोई ध्यान नहीं दिया।"

सत्य विचार ने आगे लिखा है— "कलकत्ता की लगभग ८० लाख जनसंख्या में १० लाख प्रवासी राजस्थानी हैं। पत्र ने पश्चिमी बंगाल सरकार से यह अपेक्षा की है कि इन १० लाख व्यक्तियों को भी सह अस्तित्व एवं समानता का अधिकार प्राप्त है। पत्र के ही शब्दों में 'हत्या के इस मामले की और २०-२५ हजार लोगों को जांच की मांग को स्वीकार न करने से क्या गुण्डा तत्वों को प्रश्रय नहीं मिल रहा? ये कुछ प्रश्न हैं जो पश्चिमी बंगाल सरकार के समक्ष हैं। हम जहां एक राष्ट्र की बात करते हैं वहां क्या राजस्थानी, क्या बंगाली, क्या कोई और प्रांतवासी, सभी भारतीय हैं और एक बेगुनाह भारतीय की हत्या पर सरकार की उपेक्षा दिखाना जनता के दिलों में अश्रद्धा उत्पन्न करती है।

हम भारतीय चाहे वह कहीं का हो, उसका जानमाल की सुरक्षा की गारंटी आवश्यक है।" पत्र ने आगे पश्चिमी बंगाल सरकार की इस असफलता पर भर्त्सना की है। हमारा लक्ष्य यह नहीं है कि पत्र के सारे विचार उद्धृत करके इस हत्याकांड को कोई और रंग दें पर यह निर्विवाद सत्य है कि इस मानवीय हत्या की जांच नहीं की गई। यदि जांच होती तो कोई तथ्य उभर कर प्रकट होने की पूर्ण संभावना थी।

सत्यविचार के अनुसार— "उपरोक्त घटना से राजस्थान सरकार का भी सम्बन्ध है। राजस्थान के दस लाख लोग बंगाल में रह रहे हैं। उनमें से एक अगर एक की भी हत्या हो जाय तो सरकार का नैतिक दायित्व हो जाता है कि वह बंगाल सरकार से इसकी जांच करा कर अराजक लोगों को दण्डित कराने का प्रयत्न करे। आज भले ही दस लाख लोग बंगाल मे रहते हों लेकिन अन्ततः वे राजस्थानी हैं। अगर राजस्थानी लोग देश के किसी भी हिस्से में रहें सरकार का कुछ दायित्व तो उन पर आता ही है। हम यह कथन इस प्रकार पुष्ट करे कि एक राष्ट्र के लोग किसी दूसरे राष्ट्र में रहते हुए भी उस राष्ट्र पर अपने राष्ट्रजन के संरक्षण का दायित्व होता ही है। उसी प्रकार राज्य सरकार भी बंगाल सरकार को बाध्य करे कि प्रवासी राजस्थानियों के साथ दुर्व्यवहार न हो।"

पत्र ने केन्द्रीय सरकार के दायित्वों पर भी प्रकाश डाला है। उसकी राय में केन्द्रीय सरकार का यह दायित्व कि राज्य सरकार को अपने कर्तव्य मे अवगत कराए।

भारत के अन्यान्य समाचार पत्रों ने भी इस घटना को प्रकाशित किया तथा कुछ एक ने कार्यवाही की मांग भी की। 'सत्य विचार' के अनुसार जुलूस में २०-२५ हजार व्यक्ति सम्मिलित थे। कुछ प्रत्यक्षदर्शी शव यात्रा की भीड़ को इससे कही अधिक

बताते हैं। कुछ लोगों की राय में ऐसी शव-यात्रा कई बड़ा सेठों व लक्षाधीशों की मृत्यु पर भी देखने में नहीं आई। संभवत: यह प्रथम अवसर था जबकि किसी गुमास्ते की मृत्यु पर करोड़ों का काम-काज बंद हुवा हो। यह भी शायद पहला ही अवसर था जब कलकत्तावासी पूरे ५-५½ घंटों तक शव-यात्रा जैसे कार्य में व्यस्त रहे हों। कलकत्ते के व्यस्त जीवन में ५-५॥ घंटे समय देना एक बहुत बड़ी बात होती है। नीमतल्ला घाट जहां मुर्दा जलाने के लिए क्यू लगती है, ऐसे अभूतपूर्व दृश्य का साक्षी कभी नहीं बना होगा जैसा ११ अप्रेल को हुवा था। शव-यात्रा में हजारों का जनसमुदाय था। जुलूस में शव की गाड़ी के पीछे शोक व्यक्त करते हुए कम से कम दो हजार ऐसे लोग थे जिन्होंने अपनी भुजाओं पर काली पट्टियां बांध रखी थीं। इन दो हजार शोक-प्रदर्शनकारियों के पीछे अपार जन-समुदाय था जो शोक के इस अवसर पर अपनी श्रद्धांजलि देने शव-यात्रा में सम्मिलित था।

दिल्ली से निकलने वाले पत्र The Statesman ने अपने १२ अप्रेल १९६९ के अंक में उन दो हजार व्यक्तियों का जिक्र किया है जिन्होंने काली पट्टियां धारण करके शोक-प्रदर्शन किया था। पत्र की भाषा यहां अविकल रूप से उद्धृत की जाती है—

"Calcutta, About. 2000 people from Bara Bazar area today staged a demonstration carrying the body of a person stabbed to death in the area on April 9, says P T.I. Wearing black badges the men came in a procession led by Sh. Nepal Roy and Ramakrishna Saraogi, two Congress M.L.A s'. to show the sense of in-security in their area"

यह समाचार प्रेस ट्रस्ट आफ इण्डिया की समाचार एजेन्सी ने प्रसारित किया तथा भारत के प्राय: सभी प्रमुख पत्रों में प्रकाशित हुआ था। इन पत्रों में दैनिक नवभारत टाइम्स, टाइम्स ऑफ इण्डिया, हिन्दुस्तान, वीर अर्जुन एवं इण्डियन एक्सप्रेस उल्लेख-

नीय है। प्रादेशिक स्तर के पत्रों में भी इस समाचार का प्रकाशन मिला था। जयपुर से निकलने वाले दैनिक पत्र राष्ट्रदूत ने अपने १८ अप्रैल १९६९ के अंक में इस घटना को प्रकाशित किया है।

समाचार इस प्रकार है—'कलकत्ता, १२ अप्रैल बड़ा बाजार क्षेत्र में हुई चाकूबाजी की घटना को लेकर नया सुरक्षा की मांग करते हुए व्यक्तियों ने शांत और मौन प्रदर्शन किया। प्रदर्शनकारी काले रूमाल बांधे थे जिनका नेतृत्व कांग्रेसी नेता गोपालराय व राम कृष्ण सरावगी कर रहे थे। खाद्य मंत्री सुधीन कुमार ने प्रदर्शनकारियों को आश्वासन दिया कि इस क्षेत्र में जनता की सुरक्षार्थ कदम उठाए जाएंगे।"

इसी प्रकार की भावना प्रायः अन्य समाचार पत्रों में भी पढ़ने को मिलती है। हमने कलकत्ता, दिल्ली व बीकानेर के पत्रों का हवाला देकर यह बताने का प्रयास किया है कि इस अमानवीय हत्याकांड की प्रतिक्रिया व्यापक रूप से हुई थी। यह केवल साधारण हत्याकांड नहीं था जो कुछ व्यक्तियों के बीच लड़ाई के कारण हो जाता है। इस हत्याकांड ने कई बातें हमारे सामने खड़ी करदी जो आज भी किसी न किसी रूप में कलकत्ते में विद्यमान हैं। जो बड़ा बाजार क्षेत्र एक सुरक्षित एवं अजेय स्थान माना जाता था, इसी हत्याकांड के पश्चात सर्वाधिक आतंकपूर्ण कार्यवाहियों का स्थान बन चुका है तथा वहां वातावरण शांतिमय नहीं रहा है। ऐसी घटनाएं यदाकदा होती रहती हैं।

इस ग्रंथ में हमने ९ अप्रैल १९६९ को शहीद हुए श्री इन्द्रचंद सोनावत के जीवन का पूरा वृतान्त इसी उद्देश्य से दिया है ताकि आने वाली पीढ़ियां और उसके समवयस्क उन आदर्शों के प्रति निष्ठावान बनें जिनके लिए वह व्यक्ति जीवित [illegible] उनकी रक्षा के लिये वह शहीद होगया। ज[illegible]
घटनाएं स्मरणीय बन जाती हैं। आदर्शों [illegible]

होमने वाले अमर हो जाते हैं। वर्ष, युग और शताब्दियां बीत जाएंगी पर ऐसी घटनाएं इतिहास में स्थान पाने के कारण मानवता का पथ प्रशस्त करती रहेंगी। वे आगे आने वाली पीढ़ियों की धमनियों में साहस का संचार करेंगी तथा उन्हें सदैव मर्यादित रहने में सहयोग देंगी। ऐसी मृत्यु भी लाखों में किसी एक को नसीब होती है— मृत्यु के समय जो कर्तव्य को सर्वोपरि रखे तथा माता-पिता, बन्धु, भगिनि, पत्नि, पुत्र आदि के मोह को तिलांजलि देकर जानबूझकर मृत्यु वरण करे ऐसे नररत्न वस्तुतः लाखों में एक ही होते हैं। उनके सम्बन्ध में निम्न बात चरितार्थ होती है:-

"शैले शैले न माणिक्यं मौक्तिकयं न गजे गजे।
साधवो नहि सर्वत्रः चंदनं न वने वने।"

इतिहास के क्रम में जो कालातीत व्यक्तित्व तैयार होते रहते हैं उनमें शहीद बाबू इन्द्रचन्द सोनावत को भी अपना उपयुक्त स्थान मिलेगा। ये व्यक्ति ही तो मानवता के खजाने की संपत्ति हैं उनके उदाहरणों के अभाव में मानवता दरिद्र हो जाएगी अतः इन उदाहरणों का रक्षण तथा अनुगमन हम लोगों के लिए आवश्यक है।

अंत में लेखक भी अन्य असंख्य भारतवासियों की तरह उस महान आत्मा की शांति के लिए भगवान से प्रार्थना करता हुआ अपेक्षा करता है कि शहीद बाबू इन्द्रचन्द का बलिदान ऐसे कई नरवीरों का पथ प्रशस्त करेगा जो कर्तव्य की अग्निवेदी पर मुस्कराते हुए प्राण न्योछावर करने को तैयार रहते हों। हमारा उद्देश्य तभी पूर्ण होगा जब इस भारत में एक नहीं अपितु असंख्य इन्द्रचन्द सोनावत जन्में ताकि मां वसुन्धरा के ऋण से हम उऋण हो सकें। रत्न प्रसविनि भारत माता समय-समय पर ऐसे नर-रत्न पैदा करती है जो कई युगों व शताब्दियों तक प्रेरणा पुञ्ज बने रहते हैं। श्री इन्द्रचन्द सोनावत भी निसंदेह उन्हीं नररत्नों में से एक थे।